!! श्री परम गुरु परमात्मने नमः !!

परम ज्ञान प्रकाश

अक्टूबर- 2025

आध्यात्मिक मासिक

श्री गुरु गद्दी दिवस पुष्पांक

वर्ष ५६

श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम, परमपुरी
रायपुरचौर रोहतास (बिहार)

अंक १०

श्री श्री १००८ श्रीमत् परमहंस स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज जी के पावन गुरुगद्दी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ ।

अमृतं तू विद्याः

इतः पूर्णः ततः पूर्णः पूर्णात्पूर्णः परात्परम्। पूर्णानन्द प्रपद्येऽहं सद्गुरू शंकर स्वयम्।।

परम ज्ञान प्रकाश

अक्टूबर, २०२५

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।
(श्रीमद्भगवद्गीता।।२.४७।।)

"तुम्हें अपना कर्म (कर्तव्य) करने का अधिकार है, किन्तु कर्म के फलों के तुम अधिकारी नहीं हो। तुम न तो कभी अपने आपको अपने कर्मों के फलों का कारण मानो, न ही कर्म न करने में कभी आसक्त होओ।

वर्ष – ५६
अंक : १०

–: गुरु–स्तुति :–

मंगल मूरति सद्गुरु, मिलवैं सर्वाधार।
मंगलमय मंगलकरण, विनवौं बारम्बार ।।१।।
ज्ञान–उदधि अरु ज्ञान घन, सत्गुरु शंकर रुप।
नमो–नमो बहु बारहीं, सकल सुपूज्यन भूप।।२।।
सकल भूलनाशक प्रभु, सत्गुरु परम कृपाल।
नमो कंज–पदयुग पकड़ि, सुनु प्रभु नजर–निहाल।।३।।
दया–दृष्टि करि नासियो, मेरो भूल रु चूक।
खरो तीक्ष्ण बुद्धि मोरि ना, पाणि जोड़ि कहूँ कूक।।४।।
नमो गुरु सत्गुरु नमो, नमो–नमो गुरुदेव।
नमो विघ्न हरता गुरु, निर्मल जाको भेद।।५।।
ब्रह्मरुप सत्गुरु नमो, प्रभु सर्वेश्वर रूप।
राम दिवाकर रुप गुरु, नाशक भ्रम तम–कूप।।६।।
नमो सुसाहब सत्गुरु, विघ्न विनाशक द्याल।
सुबुद्धि विगासक ज्ञान–प्रद, नाशक भ्रम–तम–जाल।।७।।
नमो–नमो सत्गुरु नमो, जा सम कोउ न आन।
परम पुरुषहू तें अधिक, गावें संत सुजान।।८।।

ψψψ

परम ज्ञान प्रकाश

(आध्यात्मिक मासिक)

प्रकाशन कार्यालय

श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम, परमपुरी, ग्राम व पोस्ट–रायपुरचौर, निकट–रेलवे स्टेशन सासाराम से 14 कि.मी.गुप्ताधाम वाले रोडपर, जिला–रोहतास,(बिहार), पिन कोड–821113.

मो०–7372000511

संस्थापक

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य परमश्रद्धेय

सद्‌गुरुदेव

ब्रह्मलीन श्री श्री 108 श्रीमत्स्वामी परमज्ञानानन्दपुरीजी महाराज

सम्पादक

डॉ नरेन्द्र तिवारी 'ज्योतिर्विद'

मो०–9839143791

कार्यकारी सम्पादक

श्री जगदीश प्र० सिन्हा 'दयानिधि'

मो०–9334319012

सह–सम्पादक

स्वामी प्रज्ञानन्दपुरीजी

मो०–7060862109

E-mail ID:
paramgyanprakash@gmail.com

मो०–7372000512

सद्‌गुरु–धाम

श्री गुरु मन्दिर नंगली तीर्थ,

प़त्रा० सकौती टाण्डा, भाया– मण्डोरा, जिला–मेरठ (उ०प्र०)

प्रमुख शाखा केन्द्र

1. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** सद्‌गुरुनगर ग्राम व पो०–भरमाड़, तह०–ज्वाली, जिला–काँगड़ा (हिमाचल प्रदेश) मो– 09418193892
2. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,परमधाम,*** एम०–3 शास्त्री नगर, नई दिल्ली–52, मो०–09999752158
3. ***श्री अद्वैत स्वरूप हीरापुरी सत्संग भवन,*** 613/7 पंचकुला, (हरियाणा) मो०–09463205587,09417255989
4. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** कत्था फैक्ट्री के पीछे, हजारी बाग, नित्यानन्द स्वामी मार्ग, कनखल, हरिद्वार(उत्तराखण्ड)मो० 09999801789,09999752158
5. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** मथुरा बांध, पो० व जिला–गढ़वा (झारखण्ड) मो० 09431338705
6. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम परम तपोधाम,*** ग्राम–नागनाथ पुरवा, पो–सिगहा–चन्दा, जिला–गोण्डा (उ०प्र०) मो.–9935027850
7. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** 318–बी आवास विकास जनकपुरी,पो० इज्जतनगर, बरेली (उ०प्र०)
8. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,***ग्राम–मोर डिहरी, पो०–पड़रावाँ, औरंगाबाद (बिहार), मो०– 8002528014
9. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** ग्रा० व पो०–सोनबरसा, औरंगाबाद (बिहार) मो०–9199603768
10. *श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,* ग्राम व पो०कारा, जिला–औरंगाबाद (बिहार) मो०–9955655225
11. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** अखिल भारतीय श्री परमधाम, नसरुल्लापुर, बदायूँ (उ.प्र)
12. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** श्री ठाकुर द्वारा गोसाई गोवर्धन, बालापुरीजी, केशव धाम, टंगेल रोड, ग्राम–सिरसगढ़, पो० मुलाना, अम्बाला (हरियाणा) मो०–9315686000
13. ***श्री अद्वैत स्वरूप हीरा परमज्ञान आश्रम,*** स्वामी परम नगर (बंगा रोड), खोथरा रोड, फगवाड़ा, जिला– कपूरथला–14441 (पंजाब) मो०–7973512449
14. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** ग्राम–मकराईन, पो०–डालमियाँ नगर, जिला–रोहतास (बिहार) मो०–99399552856, 8102963320
15. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** परमनगर, नियर–माइको, सासाराम, रोहतास (बिहार) मो०–7992457251, 9473053852
16. ***श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,*** ग्राम गुंजीयाबोर, पो०–हसौद, वाया–बिर्रा, जिला–जाजंगीर (चांपा), छत्तीसगढ़–495661, मो०–09430477071
17. **श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,** लीलाचक, पो. सन्सा, जिला–औरंगाबाद (बिहार)
18. **श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम,** टीपा, पो0 नौहट्टा (रोहतास)। मो0– **6205217308**

अनुक्रमणिका

1.	गुरु–वन्दना	03
2.	सम्पादकीय	04
3.	श्री परमहंस उवाच	05
4.	श्री स्वरूप वचनामृत	06
5.	श्री हीरा सन्देश	08
6.	अमृत प्रसाद	12
7.	प्रवचन पीयूष	19
8.	प्रवचन सुधा	21
9.	सत्संग सुधा	22
10.	कथा–लोक	24
11.	रूहानी जांनशीन	25
12.	आश्रम समाचार	28
13.	मासिक राशिफल एवं मुख्य पर्व (माह अक्टूबर एवं नवम्बर, 2025)	30
14.	विवेक वाटिका	32

–: गुरु–वन्दना :–

नमो नमो श्री सद्गुरु, नमो सच्चिदानन्द।
है प्रणाम गुरु आपको, सब संतों के संग।।
गुरु तेरी अरदास है, सुन लो मेरी पुकार।
तुम घट घट को जानते, तुम प्रभु! जगदाधार।।
सेवक को सामर्थ्य दो, अर्ज करो मंजूर।
गुरु–चरणों में प्यार हो, पल भर रहूँ न दूर।।
रिद्धि–सिद्धि, धन–सम्पदा, परमारथ के काज।
शरण आपकी दास है, रखना मेरी लाज।।
करके मेरे मन को निर्मल,कर दो सब दुःख दूर।
सेवक की अरदास है, करो नाथ! मंजूर।।

किसी भी रास्ते से यदि कोई प्रेम की हद कर दे, चाहे वह सांसारिक प्रेम ही क्यों न हो, वहाँ अवश्य ही दिव्य भाव प्रकट हो जाएगा। लैला–मजनूँ, शरीं–फरहाद, हीर–राँझा का प्यार इसी दर्जे का तो था। प्रेम की ऐसी पूर्णता प्राप्त हो जाने पर अगले जन्म में फौरन उसके लिए ऐसी व्यवस्था हो जायेगी जहाँ उसको आध्यात्मिक विकास का मौका मिल जाएगा। –स्वामी परम!

सम्पादकीय...

''इष्ट की निष्काम सेवा से क्रियमान कर्मों का संस्कार नहीं बनने पाता। प्रारब्ध कर्म भोगकर खत्म किये जाते हैं और संचित कर्म इष्ट का ध्यान हृदय में बनते ही दग्ध हो जाते हैं। इस प्रकार जीव तीनों प्रकार के कर्मों के बन्धन से छूट जाता है और तब कल्याण का अधिकारी होता है।''

उपर्युक्त पुरो वाक्य हमारे आराध्य प्रातः स्मरणीय जगतवंद्य अनन्तश्री विभूषित् श्री परमज्ञानानन्दपुरी जी महाराज (पूज्य गुरुदेव) के हैं। श्वेताश्वतर उपनिषद् में (६.२३) में कहा गया है कि–

''यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ। तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।''

अर्थात् ''जिसमें भगवान् के लिए अविचल भक्तिभाव होता है और जिसका मार्गदर्शन गुरु करता है, जिसमें भी उसकी वैसी ही अविचल श्रद्धा होती है, वह भगवान् का दर्शन प्रकट रूप में कर सकता है।''

मानसिक चिन्तन द्वारा भगवान् को नहीं समझा जा सकता। जो व्यक्ति प्रमाणिक गुरु से मार्गदर्शन प्राप्त नहीं करता, उसके लिए भगवान् को समझने का शुभारम्भ कर पाना भी कठिन है। यहाँ पर तू शब्द का प्रयोग विशेष रूप से यह सूचित करने के लिए प्रयुक्त हुआ है कि कोई अन्य विधि से न तो इसे बताई जा सकती है और न प्रयुक्त की जा सकती है और न ही भगवान् को समझने में सफल हो सकती है। कहने का तात्पर्य यह है कि श्री भगवान् की प्राप्ति 'भक्ति–तत्व' के बिना संभव नहीं है। उन्हें जानने एवं समझने के लिए किसी सामर्थवान् गुरु की कृपा एवं मार्गदर्शन अवश्यक है। गुरु अपने दिव्य ज्ञानामृत से शिष्य को सिंच कर उसके क्रियमान कर्मों को नष्ट कर उसे कल्याण के अधिकारी बना देते है। भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है–**''नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया। शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा।।**

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं चे तत्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप।।''

(श्रीमद्भ०गीता ११.५३–५४)

अर्थात् ''तुम अपने दिव्य नेत्रों से जिस रूप का दर्शन कर रहे हो, उसे न तो वेदाध्ययन से, न कठिन तपस्या से, न दान से, न पूजा से ही जाना जा सकता है। कोई इन साधनों के द्वारा मुझे मेरे रूप में नहीं देख सकता। हे अर्जुन! केवल अनन्य भक्ति द्वारा मुझे उस रूप में समझा जा सकता है, जिस रूप में मैं तुम्हारे समक्ष खड़ा हूँ और इसी प्रकार मेरा साक्षात् दर्शन भी किया जा सकता है। केवल इसी विधि से तुम मेरे ज्ञान के रहस्य को पा सकते हो।''

अन्त में मैं अपने परमाराध्य पूज्यपाद श्री सद्गुरुदेव भगवान्जी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ कि वे अपनी कृपा–दृष्टि हम सब पर बनाए रखें। गुरु दरबार की ओर से हमारे आराध्य पूज्य गुरु भगवान् का अशेष आशीर्वाद आप सभी को प्रप्त हो! आपके पत्र की प्रतिक्षा में! **!!''जय सच्चिदानन्द''!!**

श्रीगुरुचरणेशु
जगदीश प्र०सि०'दयानिधि'
कार्यकारी सम्पादक

❋

श्री परमहंस उवाच :–

भक्ति और शरणागति

जगतवंद्य,श्री श्री १००८ श्रीपरमहंस दयालजी महाराज ने एक जिज्ञासु भक्त के शंका का निराकरण करते हुए फरमाया–'हमारे विचार में शरणागति कोई धर्म या कर्म का अंग नहीं, यह अवस्था है जो कर्म, उपासना, भक्ति, ज्ञान के अनत होने पर प्राप्त होता है। जैसे दूध, दही, मक्खन से भी घी प्राप्त होता है। इसलिए कर्म, उपासना, भक्ति, ज्ञान बताने के बाद श्री कृष्ण भगवान् ने गीता में शरणागति का उपदेश दिया है। इससे स्पष्ट है कि यही सार है। शरणागत के मन, वाणी और देह सबको चलाने वाली पथ प्रदर्शक और रक्षक कोई और ही शक्ति प्रतीत होती है। यदि देश काल व स्मृति के भेद से किसी काम की याद भूल जाए तो कोई शक्ति याद दिला देती है। कोई काम बिगाड़ने वाला हो तो वह शक्ति स्वयं उसे सुधार देती है।'–सम्पादक!

एक बार एक जिज्ञासु सेवक ने विनय की कि भक्ति और शरणागति में क्या अन्तर है ? महाप्रभु बोले– वास्तव में इन दोनों में कोई अन्तर नहीं। भक्ति ही किसी अवस्था पर पहुँच कर शरणागति का रूप धारण कर लेती है। भक्ति दो प्रकार की होती है– एक **साधन भक्ति** जिसमें विषयों से रहित वृत्ति भगवान् पर हर समय लगी रहती है। दूसरी **साध्य भक्ति** जो साधना द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार होने पर उत्पन्न होती है। ईश्वर के लिये प्रेम की पराकाष्ठा और परम अनुराग को भी भक्ति कहते हैं।

श्रवणं, कीर्तन, विष्णो, स्मरणं, पाद सेवन,
अर्चनम् वन्दनम्, दास्य, सख्यमात्म निवेदनम।

इन सब में नवां आत्म निवेदन है। भक्त की इच्छा भगवान् की इच्छा में लीन हो जाती है। कामना और अंहकार आत्म निवेदन के बाधक हैं, आत्म निवेदन सम्पूर्ण भाव से हो। जो भक्त कुछ कामनाओं को अपनी तृप्ति के लिए बचा रखता है, वह पूर्ण आत्म–सर्मपण नहीं कर पाता, इसलिए श्री भगवान् ने कहा है– ''सारे धर्मो को छोड़कर मेरी शरण में आ जा, मैं तुझै सारे पापों से छुड़ा दूँगा।' यदि कोई भक्त इस श्लोक के भाव को निरन्तर अपने मन के सामने रखता है तो उसे आत्म समर्पण करने में वह शक्तिशाली मंत्र बहुत सहायता करता है। शरणागति भी दो प्रकार की होती है– (1) जो गुरु और भगवान् की कृपा से प्राप्त होती है, इसको विडाली भी कहा है। जैसे बिल्ली अपने बच्चे को मुँह में डाल कर उठाये फिरती है, इसी तरह गुरु और भगवान् की रक्षा के आश्रय वह रहता है। (2) जो नियमानुसार गुरु के उपदेश द्वारा जन्म–मरण और भव सागर के दुःखों से निवृत होकर भगवान् ही को साध्य और साधन समझ कर होती है। शरणागति में कितनी करुणा वात्सल्य भाव और सीधा भोलापन भरा होता है।

हमारे विचार में शरणागति कोई धर्म या कर्म का अंग नहीं, यह अवस्था है जो कर्म, उपासना, भक्ति, ज्ञान के अनत होने पर प्राप्त होता है। जैसे दूध, दही, मक्खन से भी घी प्राप्त होता है। इसलिए कर्म, उपासना, भक्ति, ज्ञान बताने के बाद श्री कृष्ण भगवान् ने गीता में शरणागति का उपदेश दिया है। इससे स्पष्ट है कि यही सार है। शरणागत के मन, वाणी और देह सबको चलाने वाली पथ प्रदर्शक और रक्षक कोई और ही शक्ति प्रतीत होती है। यदि देश काल व स्मृति के भेद से किसी काम की याद भूल जाए तो कोई शक्ति याद दिला देती है। कोई काम बिगाड़ने वाला हो तो वह शक्ति स्वयं उसे सुधार देती है। यदि किसी कर्म फल से धर्म की भावना हो जाए तो वह छिपी हुई शक्ति स्वयं उस कर्म–क्रिया को ऐसा बदल देती है कि अधर्म के स्थान पर धर्म हो जाता है। सारांश यह है कि शरणागत को किसी बात के सोचने, विचारने, चिन्ता करने की आवश्यकता नही रहती। शरीर, मन, बुद्धि आदि इस तरह चलते हैं जैसे बिजली की शक्ति से मशीन चलती है और इन्जीनियर मशीन की देख–भाल करता रहता है। सब कर्म, धर्म का फल अन्त में शरणागति है।

श्री स्वरूप वचनामृत :—

गीता ज्ञान रहस्य

परमाराध्य अनन्तश्री विभूषित श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्री श्री १००८ श्री मत्परमहंस स्वामी स्वरूपानन्दपुरीजी महाराजजी जिज्ञासु भक्त के गीता ज्ञान से संबंधित प्रश्नों का निवारण करते हुए महाप्रभु बोले—''गुरुमुख प्रेमी, वास्तव में अर्जुन अपने संबधियो को सगा मानता था और अपने को जीव मानकर माया—मोह में आसक्त हो चुका था। अपने स्वरूप के साक्षात्कार के लिए भगवान कृष्ण ने उसे योग का उपदेश दिया। इस योगी जीव को योग का उपयोग परम आवश्यक है इसको ब्रह्मा—विद्या भी कहते हैं। जब तक यह जीव अपने को स्वरूप नही मानता उसे सच्ची शांति नही मिल सकती।''—सम्पादक!

एक दिन किसी भक्त ने आकर प्रार्थना की— सदगुरुदेव महाराजजी भगवान कृष्ण ने अर्जुन के विषाद और निराशा का अनुभव करके उसे विशेष उपदेश श्रीमदभगवद् गीता के रूप में दिया। भगवान कृष्ण ने उसे फिर से कर्मयोग में आरूढ़ किया अर्थात युद्ध करने पर बाध्य किया। गीता के छठे अध्याय में मुरली मनोहर ने अर्जुन को योगाभ्यास करने की प्रेरणा दी। केशव ने कहा— ''वासनारहित, संग्रहरहित योगी एकान्त स्थान में स्थित हुआ निज आत्मा को परमात्मा के ध्यान में लगावे। शुद्ध भूमि पर कुशा, मृगछाला और वस्त्र का आसन बिठाकर मन को एकाग्र करके चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओ को वश में करके अन्तःकरण की शुद्धि के लिए योगाभ्यास करे। वह आसन ना बहुत ऊँचा हो और ना अति नीचा। इस प्रकार शरीर सिर और ग्रीवा को समान और अचल करके दृढ़ होकर नासिका के अग्र भाग को देखे। महाप्रभु यह बातें क्या युद्धभूमि में अर्जुन कर सका होगा। इन बातो से युद्ध का क्या सरोकार था ? प्रभु को तो यह चाहिए था कि वह अर्जुन को युद्धकला की शिक्षा देते और वीरता का पाठ पढ़ाते। भला इन बातो से अर्जुन को क्या लाभ था? महाप्रभु बोलेः— ''गुरुमुख प्रेमी, वास्तव में अर्जुन अपने संबधियो को सगा मानता था और अपने को जीव मानकर माया—मोह में आसक्त हो चुका था। अपने स्वरूप के साक्षात्कार के लिए भगवान कृष्ण ने उसे योग का उपदेश दिया। इस योगी जीव को योग का उपयोग परम आवश्यक है इसको ब्रह्मा—विद्या भी कहते हैं। जब तक यह जीव अपने को स्वरूप नही मानता उसे सच्ची शांति नही मिल सकती। इस अर्जुन रूपी जीव ने जो कुछ अपने को मान रखा है वास्तव में यह उसका रूप नहीं। तभी तो यह किसी का बनता है और किसी को अपना बनाता है। परंतु योग साधन से अपने स्वरूप के दर्शन कर लिये तब वे एकाग्रचित्त होकर अपने को अमर और अविनाशी समझकर धर्म स्थापना के लिए निष्काम कर्म करेगा । भगवान कृष्ण डॉक्टर रूप थे अर्जुन रोगी था। डॉक्टर को शरीर का सारा ज्ञान होता है वह जानता है कि रोगी का ऑपरेशन कहाँ करना हैं। यदि किसी भयंकर रोग का पता चल जाय और कोई अंग काटना भी पड़े तो उसे काट देता है। शरीर किसी का है परंतु यह उसका स्वामी होकर भी शरीर की क्रिया और व्यवहार का ढंग नही जानता। जिस समय अर्जुन ने निराशापूर्ण यह शब्द कहेः— ''हे मधुसूदन मैं इस युद्ध में अपने संबंधियों को मारकर रक्त से सने राज्य को लेकर क्या करूँगा। तब भगवान कृष्ण ने अर्जुन को इस मोह से निकालने का प्रयत्न किया । भगवान ने डॉक्टर रूप होकर परामर्श दिया कि अधर्म रूप होने फोड़े वाले अंग को काट दे। जिससे आरोग्य रूप ध र्मानुरागी व्यक्तियों के बचे रहने से संसार में शांति होगी। ऐसी विकट परिस्थिति में प्रभु ने अर्जुन को योग मार्ग दर्शाया। उसकी उपरामता दूर करने के

लिए भगवान ने उसे योग सिद्धि करवायी। गीता ज्ञान सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है। इसमें भक्ति योग ज्ञानयोग के अतिरिक्त राज–योग का भी बड़े विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। राज–योग के मार्ग द्वारा जीव गृहस्थ आश्रम में रहकर भी मोक्ष पद को प्राप्त कर सकता है। प्रभु ने अर्जुन को यह ज्ञान करा दिया कि ना तो तू मरने वाला है और ना ही मारने वाला है। तू कभी भी नेह–कर्मी नही हो सकता। इसलिए मनुष्य को धर्म और मर्यादा अनुसार कर्म करना चाहिए। अर्जुन भगवान की आज्ञा अनुसार कर्म करता रहा। अर्जुन को प्रभु ने राज–योगी प्रसिद्ध किया। सर्व साधारण व्यक्ति गीता तो प्रतिदिन पढ़ते हैं परंतु इसके रहस्य को नहीं जानते। भगवान् कृष्ण ने युद्ध भूमि में श्लोकों की रचना करके अर्जुन को गीता नही सुनाई बल्कि उसे तत्वज्ञान उपदेश देकर कर्मयुक्त किया। अब गीता का पाठ करने वालो को कौन समझाये कि तत्वज्ञान यह है वे दिन–रात पाठ करने में मगन है। जिज्ञासु ने प्रश्न कियाः–"हे सतगुरुदेव महाराज गुरु ग्रंथ साहिब में मैंने यह श्लोक पढ़ा हैः–

मनमन्दिर तन वेश कलन्दर घट ही तीर्थ नहावां।
एक शब्द मेरे प्राण बसत है बौढ़ जन्म नहीं आवा।।

यह बताइये कि यह घट का तीरथ कहाँ है? प्राणों में कौन सा शब्द बसा है और मन का मंदिर कहाँ है? वह शब्द अथवा जाप कौन सा है जो कि श्वासों द्वारा जपा जाता है और जिससे जीव आवागमन के चक्कर में नही पड़ता। महाप्रभु बोलेः– "इस शरीर में मंदिर वह है जहॉ मन का निवास हो मन का निवास स्थान विरले योगी ही जान पाये हैं त्रिकुटी स्थान जहाँ चार अन्तःकरण है–1.मन, 2. बुद्धि, 3. चित्त, 4. अहंकार यही मन मंन्दिर है यहाँ एक गुप्त तीरथ है जहा मल विक्षेप धुल जाते हैं इस मन–मंदिर में आत्मारूपी ठाकुर जी के दर्शन होते हैं मन ने इस मंदिर पर अधिकार किया हुआ है। उसने अनेक प्रकार के संकल्प–विकल्प से आत्मा को ढापा हुआ है आत्मा की केवल अनुभूति होती है परंतु प्रत्यक्ष दिखाई नही देती। जैसे आग से धुआँ उत्पन्न होकर उसे ढॉप देता है अधिक धुआँ होने के कारण आग छिपी हुई है दोनो एक ही रूप, परंतु धुआँ दुःख रूप है और अग्नि सुख रूप। जब सत्संग रूपी तृक्ष्ण वायु चलती है तब धुआँ उड़कर अग्नि प्रचंड हो जाती है इस प्रकार आत्म अनुभव होता है तब मन का नाश समझना चाहिए। त्रिकुटी स्थान दोनों आँखों के मध्य में है। यही से संकल्प और स्वप्न आरम्भ होता है। यह स्थान गुप्त है। गुरुवाणी का कथन हैः–

इंड़ा पिंगला सुखमना तीन बसे एक ठाई।
बेनी संगम तहां प्रयाग मन मज्जन करे तिथाई।
संतो तहां निरंजन राम है गुरु गम चीन्हें विरला कोय।।

अब अन्दर के प्रयाग की बाते सुनिए इड़ा दाहिने नासिका है और पिंगला बाई। सुषम्ना दोनो के मध्य में है। नाभि से लेकर सिर की चोटी तक यही स्वांसों के आने का मार्ग है। यही सुषम्ना नाड़ी कहलाती है। इन तीनों नाड़ियों का मिलाप त्रिकुटी द्वार आँखों के ऊपर मस्तक के अन्दर होता है। इंड़ा गंगा नाम से प्रसिद्ध है और पिंगला यमुना और सुषम्ना सरस्वती नाम से प्रसिद्ध है। यह गुप्त रूप से आकर उन दोनों से मिलती है। तीरथ राज प्रयाग का मानसिक स्नान यहीं पर होता है। बाह्य तीर्थ राज प्रयाग में स्नान करने से शरीर पवित्र होता है। परंतु घट के इस तीरथ राज प्रयाग में स्नान करने से मन की मलिनता दूर होकर आवागमन का चक्कर कटेगा। इस तीरथ राज में स्वांस रूपी निर्मल जल आठो पहर प्रवाहित हो रहा है। अब यह जल कौन सा है? दोनो नासिकाये वायु अर्थात् स्वांस लेती है और सरस्वती प्राण वायु है। यही इस गुप्त तीरथ राज का वास्तविक भेद है।

प्राणों में शब्द का निवास है घट में पूर्ण सतगुरु की युक्ति द्वारा यह शब्द प्रकट होता है। यही बीज मंत्र है इसे ही अजपा गायत्री और शब्द ब्रह्म भी कहते हैं।

–: ध्यान :–

"श्री गुरु महाराजजी की लीला अपार है। श्री गुरु महाराज जी जालन्धर किसलिये आये, अभी यह स्पष्ट नहीं है। कहते है किसी खास भक्त से मिलना है। उसे खोजते हुए चले जा रहे हैं रूकते नहीं। ढूंढते ढूंढते एक गली में रुके और ऊपर जाने के लिए मार्ग देखने लगे। तभी ऊपर से किसी ने नीचे देखा। श्री गुरु महाराज मुस्कुराए। श्री गुरु महाराज ऊपर की मंजिल पर गये। एक भक्त चारपाई पर लेटा है। रंग पीला और बीमार है। आप उसे आशीर्वाद देते हैं। भक्त की आंखों से अश्रुधारा बह रही है। श्री महाराज उसे दिलासा देते हैं। आप वहाँ से चल देते हैं। दो दिन बाद पता चला वह भक्त चल बसा। बाद में पता चला वह भक्त अपने जीवन काल में उन से केवल दो बार ही मिला था। यह कैसी लीला है, श्री प्रभु जी की। अन्त समय आर्शीवाद देना था उसे।" यह पुरो वाक्य है श्री स्वामी भगवतानन्द पुरीजी महाराज, श्री स्वामी हीरान्न्दपुरी संन्यास आश्रम, ग्राम–मिहानी, जिला–सोलन, हिमाचल प्रदेश की। –सम्पादक!

बोलना जी हरिओम्! हरिओम्!! हरिओम्!!!

सज्जनों, धारणा सिद्धि के साथ ध्यान को भी समझ लो। वास्तव में ध्यान और धारणा में कोई भेद नहीं। यह दोनों एक ही चीज के नाम हैं। केवल इतना ही अन्तर है कि धारणा में दृष्टि स्थिर की जाती है और ध्यान से उस वस्तु में लीन हो जाना होता है। कुछ लोग ध्यान को कठिन समझते हैं जबकि ध्यान बड़ा ही सरल है। आप जानते हैं जीवात्मा एक क्षण भी बिना ध्यान के नहीं रह सकता। ध्यान कहीं न कहीं घूमता रहता है, बल्कि कई समय तो एक ही वक्त में कई कई वस्तुओं का ध्यान करता रहता है। जिधर भी ले जायेगा जीव को ध्यान ही ले जायेगा। प्राणीमात्र चौबीस घन्टे, बिना परिश्रम, ध्यान करते ही रहते हैं। जिसका ध्यान जहाँ जमा होता है, उसके अनुसार ही दूसरी योनि में प्रवृत्त होता है। किसी को पता नहीं कि ध्यान द्वारा चौरासी लाख योनियों का बीज मेरे अन्दर ही है।

भाइयो, नेत्र बन्द करके चित्त–वृत्ति को हृदय में दौड़ाओ, आपके हृदय में अनेकों पदार्थों की तस्वीर आ जायेगी। मनुष्य ध्यान में स्त्री, पुरुष, माता, पिता, धन, मकान, गाय, भैंस, भेड़, बकरी, आदि किसी भी वस्तु की तस्वीर देख सकता है। आप जितनी भी चीजें अपने ध्यान में देखते हैं, वे चौरीसी के बीज ही हैं। मनुष्य अपने जीवन काल में असंख्य वस्तुओं की तस्वीरें अपने ध्यान में देखता है। अन्त समय इन तमाम तस्वीरों में से जिस तस्वीर में ध्यान प्रबल होगा, शरीर छोड़ने के बाद उसी योनि में प्रवृत्त होगी।

कहत कठिन समझत कठिन साधन कठिन विवेक।

अर्थात् ध्यान का कहना बड़ा कठिन है। कहने वाला मिल जाये तो समझना कठिन है। यदि समझ भी ले तो उसका साधन करना कठिन है। कोई पुरुषार्थी साधन कर भी ले तब नाना प्रकार के मायावी विघ्न उपस्थित हो जाते हैं। लाखों में से कोई ही पार उतरता है। आप इस बात को सुन कर हौसला न तोड़ देना।

देखो एक पाठशाला में अनेक लड़के पढ़ते हैं किन्तु किसी के दिल में फेल होने का ख्याल नहीं होता फिर भी कई फेल हो जाते हैं। यह उनके पुरुषार्थ की कमी होती है। ऐसे ही यह अध्यात्म विद्या भी एक पाठशाला है। पुरुषार्थी के लिये कोई भी स्थान प्राप्त करना कठिन नहीं है किन्तु पुरुषार्थहीन रास्ते में ही गिर पड़ेंगे।

हम ने आपको बताया है कि हृदय में चौरासी का बीज है। यह बीज समय पाकर अवश्य उगता है। इसके लिये त्रिलोचन पण्डित ने कहा है–

अन्त काल जो लक्ष्मी सुमिरे ऐसी चिन्ता में जो मरे,

सर्प जून हो बल बल अवतरे।
अन्तकाल जो मंदिर सुमिरे ऐसी चिन्ता में जो मरे,
प्रेत जून हो बल बल अवतरे।
अन्तकाल जो स्त्री सुमिरे ऐसी चिन्ता में जो मरे,
वेश्या जून हो बल बल अवतरे।
अन्तकाल जो पुत्र सुमिरे ऐसी चिन्ता में जो मरे,
सुअर जून हो बल बल अवतरे।
अन्तकाल जो नारायण सुमिरे विदित त्रिलोचन ते
नर मुक्त, मोर मुकुट पीताम्बर ताके हृदय बसे।

तो कहने का तात्पर्य है कि ध्यान ही चौरासी है। ध्यान ही आवागमन है। ध्यान ही योनियों में ले जाने वाला है। जिसका ध्यान होगा उसी में चला जायेगा। अब विचारना यह है कि ध्यान किसका करना चाहिये जिससे चौरासी का बीज हृदय से निकल जाये। कहना पड़ेगा कि हृदय में उस परम कृपालु परमात्मा का ध्यान करने से ही बीज नष्ट होगा। जिस प्रकार शेर की आवाज सुनकर ही भेड़–बकरियाँ भाग जाती हैं अथवा बन्दूक की आवाज सुनकर पक्षी उड़ जाते हैं उसी प्रकार हृदय में ईश्वर का ध्यान आते हीं उनकी अनोखी छवि के प्रकाश से चौरासी की मूर्तियाँ रात्रि के अंधेरे समान नष्ट हो जाएंगी। जिस इष्ट का ध्यान करना हो, ध्यान से पूर्व उस इष्ट को भली प्रकार समझना चाहिये और जानना चाहिये कि उसका स्थान कौन सा है, जहाँ ध्यान करना है। उसका रंग रुप कैसा है? आपने नाम–रुप–गुण के विषय के अन्तर्गत रुप के सम्बन्ध में भली प्रकार जान लिया होगा। इतना होने पर भी इष्ट को समझना आवश्यक है।

लोगों ने नाना प्रकार के इष्ट बताये हैं। जैसै जैसे देवी देवताओं का संसार में आगमन हुआ अथवा ईश्वरांश अवतार हुए उनकी शक्तियों को सुमिरन करते हुए महापुरुषों, साधु, सन्तों ने उन्हें भिन्न–भिन्न नामों से पुकारा और उन्हें ही अपना ईष्ट मान कर उनका ध्यान किया। यह सब इष्ट अनित्य हैं। अनित्य इष्ट तो किसी कार्य विशेष के लिए संसार में आते हैं और कार्य समाप्त करके चले जाते हैं। अतः अनित्य इष्ट तो घटने–बढ़ने और एक प्रकार से नष्ट प्रायः हुए। ऐसे इष्ट तो जन्म मरण वाले हुए क्योंकि अपना कार्य कर के वे प्रभु की ज्योति में लीन हो गये। अनित्य इष्ट की तुलना में एक सच्चिदानन्दघन परिपूर्ण परमात्मा जो सदैव अजर, अमर, अविनाशी, एक रस रहने वाला सत्–चित्त–आनन्द है, का ध्यान करना ही सर्वश्रेष्ठ है। अभ्यासी को सत्–चित्त–आनन्द परमात्मा का ही ध्यान करना चाहिए और ध्यान द्वारा उसी का साक्षात्कार करके उसी में लीन हो जाना चाहिये। जिसका हमें ध्यान करना है उस का निवास, सन्तों ने, हृदय में बताया है। हृदय मंदिर में स्थित होने पर भी जब तक हमारा मन और बुद्धि शुद्ध तथा निर्मल नहीं, उस प्रभु का साक्षात्कार नहीं हो सकता।

प्रेमियों! सच्चिदानन्द परमात्मा का साक्षात्कार करने की अनेक विधियाँ बतायी गयी है। उनका वर्णन श्रुतियों, स्मृतियों, उपनिषदों तथा सन्तों की वाणियों में मिलता है। उनका अध्ययन यदि आप न करें तो दोष किसका है! भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है– **सर्वस्य हृदिविष्ठितम्!** मैं सब के हृदय में बसा हुआ हूँ। श्वेताश्वेतरोपनिषद् में मंत्र आया है–

सर्वाध्यक्षः सर्वभूताधिवासः

सर्व व्यापी परमात्मा सर्वभूत प्राणियों के हृदय में है। उस सच्चिदानन्द के मनुष्य मात्र के हृदय में स्थित होने के अनेक प्रमाण हैं किन्तु यदि हम उन्हें न माने या देखने का यत्न न करें तो दोष हमारा ही है। भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा–**'विमूढ़ा नानुपश्यन्ति।'** अर्थात् जो मूर्ख लोग हैं वे हृदय में बसे हुए आनन्द घन परमात्मा को नहीं जान सकते।

अच्छा तो अब ध्यान कहाँ करोगे? अपने हृदय में ही करोगे? नाभि से लेकर ऊपर चोटी से चार अंगुल पीछे तक हृदय ही है अर्थात् यह सब ध्यान की ही जगह है। परन्तु ध्यान के एक स्थान को ही जानना चाहिये।

आपने विष्णु, शिव, गणेश, आदि देवताओं की मूर्तियाँ देखी होंगी। उन सब के मस्तिष्क में तिलक लगे भी देखे होंगे। तिलक में जिस स्थान पर बिन्दु लगाया जाता है वहीं शन्य है और वही ध्यान का

स्थान है। इसे त्रिकुटी कहते हैं। अतः त्रिकुटी में ही ध्यान करना चाहिये। त्रिकुटी में ध्यान करने से विकल्पों का नाश हो जाता है। यह त्रिकुटी ही तुम्हारा लक्ष्य–स्थान है। जिनको दिव्य दृष्टि का अनुभव है वे दिव्य दृष्टि द्वारा त्रिकुटी में ध्यान करें। फिर देखें कि कितना महान आनन्द प्राप्त होता है।

अब आप ने समझ लिया होगा कि कौन से इष्ट का ध्यान करना चाहिये और कौन से स्थान में ध्यान करना चाहिये। ध्यान त्रिकुटी में होती है। किस स्थान पर होती है। यदि आप सब कुछ समझ कर भी कुछ न करें और कहें कि ईश्वर है ही नहीं और उसका साक्षात्कार होता ही नहीं अथवा उसका गृहस्थियो को मिलना बड़ा कठिन है तो कहना पड़ेगा कि ये सब पुरुषार्थ न करने के बहाने हैं। इससे प्रतीत होता है कि ऐसी बातें करने वालों को ईश्वर के दर्शन की इच्छा ही नहीं है। वे नरकों में विष्टे का कीड़ा बनने का ही प्रयत्न कर रहे हैं।

भाइयों, ध्यान के बिना ईश्वर प्राप्ति सम्भव नहीं है। इसलिए ध्यान के बारे में और अधिक जान लो। ध्यान चार प्रकार का होता है–**पदस्थ ध्यान, पिंडस्थ ध्यान, रुपस्थ ध्यान, रुपातीत ध्यान। पदस्थ ध्यान** उसे कहते हैं जब मूर्ति सम्मुख न होते हुए भी मूर्ति का ध्यान किया जाये। मूर्ति के सम्मुख बैठ कर मूर्ति का ध्यान करना **पिंडस्थ ध्यान** कहलाता है। **रुपस्थ ध्यान** के अन्तर्गत केवल प्रकाश–रुप–सच्चिदानन्द का ध्यान किया जाता है। **रुपातीत** का अभिप्राय है रुप से परे। जब किसी प्रकार के रुप से रहित का ध्यान किया जाये तो रुपातीत ध्यान कहलाता है।

रुपातीत ध्यान को ही तुरिया पद कहा गया है। वेदों ने इस ध्यान को शून्य का ध्यान कहा है। शून्य अकार, उकार, मकार से परे है। भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है– **निस्त्रेगुण्यो भवार्जुन।**

अर्थात् हे अर्जुन, मैं तीनों गुणों से परे हूँ। जब आप ध्यान में एक घण्टा या दो घण्टे बैठेंगे, उस समय आप तीनों गुणों से परे होंगे। कारण कि आपका ध्यान तीनों गणों से परे रहनेवाले सच्चिदानन्द में होगा। वह सच्चिदानन्द ज्योतियों की अनुपम–ज्योति और प्रकाशों का प्रकाश है। कहा है– **हिरण्मये परे कोषे।** सोने की तरह उस की ज्योति की चमक है। यजुर्वेद का मंत्र है–

"अंगुष्ठ मात्र पुरुषोमध्य आत्मनि तिष्ठति।"

अब उस सच्चिदानंद प्रभु की ज्योति मनुष्य के हृदय में है।

सुमिरन सुरत लगाई के मुख से कुछ न बोल।
बाहर के पट देकर अन्दर के पट खोल।।

यह दोहा ध्यान की स्थिति की ओर ही संकेत करता है। अभ्यासी को ध्यान में पहले पहल त्रिकुटी में जुगनू समान चमक दिखाई देगी या तारामण्डल की तरह रोशनी नजर आयेगी। आहिस्ता–आहिस्ता यह प्रकाश सूर्य के सदृश्य दिखाई देने लगेगा। यही ईश्वर के विराट रुप शून्य का ध्यान है। इसी ध्यान में सब कुछ छुपा हुआ है। ध्यानी ध्यान की लगन से ही इसे देख सकता है। केवल थोड़े से पुरुषार्थ की बात है। कहा है–

जो ब्रह्माण्डे सो पिण्डे जो खोजे सो पावे।

अर्थात् पिंड और ब्रह्माण्ड में एकता है। ध्यान द्वारा जहाँ जहाँ जाओगे जिस जिस स्थान का अनुभव करोगे उस स्थान के प्रभु का वैसा ही रंग–रुप नजर आयेगा। ध्यान में आया हुआ स्वरुप, ध्यान में आये हुए लोक, ध्यान में आया हुआ ब्रह्माण्ड सदैव काल के लिए अजर, अमर तथा अखण्ड रहेगा। ध्यान द्वारा साधक जब चौथी अवस्था अर्थात् तुरिया पद में पहुँच जाएगा तो उसे वहाँ आनन्द ही आनन्द प्राप्त होगा। वहाँ वह आनन्द की चरमावस्था को प्राप्त होगा जिसकी तुलना संसार की किसी वस्तु से नहीं हो सकती। आनन्द की यह स्थिति शब्दों का विषय है। इसे कोई सच्चा ध्यानी ही प्राप्त कर सकता है।

इस अवस्था में सुख ही सुख है, ज्ञान ही ज्ञान है, वहाँ न ब्राह्मण है, न क्षत्रिय है, न वैश्य है, न शूद्र है, न स्त्री है, न पुरुष है, न गुरु है, न शिष्य है, न धूप है, न छाँव है, न भूख है, न प्यास है, वहाँ तो जो कछ है वह सदैव एकरस है।

ध्यान का विषय सरल होते हुए भी बहुत गूढ़ है। पूर्ण रुप से इसका शब्दों द्वारा वर्णन नहीं हो सकता। ध्यान के आनन्द को ध्यानी ही जान सकता है और वही इसका वर्णन कर सकता है। ध्यान स्थिर करने के लिये वृत्ति को अन्तर्मुख करना आवश्यक है। ध्यान की अन्तिम अवस्था समाधि है। ध्यान के लिए चाहिये कि बुद्धि आत्मा के अधीन हो, मन बुद्धि के अधीन हो. ज्ञान इन्द्रियों के अधीन हो तथा कर्म–इन्द्रियाँ ज्ञानेन्द्रियों के अधीन हो जब कर्म इन्द्रीयों विषयों से तथा ज्ञान इन्द्रियाँ शब्दादि विषयों से निवृत्त हो जायेंगी, तब मन के अधीन होगा और मन स्थिर होकर ध्यान में लग जाएगा।

ईश्वर को देखने का नाम ही ध्यान है। जैसे जैसे ध्यान बढ़ेगा वैसे ही वैसे ध्यान में विलक्षण तथा अलौकिक वस्तु का अनुभव बढ़ता जाएगा। जो विलक्षण वस्तु ध्यान द्वारा प्रत्यक्ष होती जायेगी वही अध्यात्म का स्वरुप है। जितना अधिक ध्यान करेंगे उतना ही अधिक प्रकाश दिखाई देता जाएगा। हृदय में प्रत्यक्ष होने पर अपने से लेकर उस परम ज्योति तक कितना फासला होता है, यह ध्यान करने वाला ही समझ सकेगा।

ध्यान अपने आप में ही बड़ी विलक्षण वस्तु है। ध्यान ही नरक है, ध्यान ही स्वर्ग है, ध्यान द्वारा ही अज्ञानी से ज्ञानी बना जा सकता है। ध्यानी जन्म मरण से मुक्त हो जाता है। ध्यानी शरीर से आत्मा और आत्मा से परमात्मा बन जाता है। ध्यान की महिमा अपरम्पार है।

एक दृष्टांत सुनिये और समझिये। रावण दुष्ट था। रावण को मारने के लिये राम का अवतार हुआ। जब रावण के वध का समय आया तो ध्यान के कारण राम विकट स्थिति में फंस गये। आप जानते हैं रावण शिव का ध्यानी था अर्थात् रावण के हृदय में शिव का निवास था। शिव के इष्ट राम होने के कारण राम का भी ध्यान स्वतः हो गया। अब यदि राम रावण के वध के लिए उसके हृदय में बाण मारें तो शिव की भी मृत्यु होगी और शिव की मृत्यु होने से उनके हृदय में बसे हुए राम की भी मृत्यु होती है।

भाइयों, ध्यान की महिमा के लिए एक और दृष्टांत सुनो। रावण के हृदय में सीता का ध्यान होने के कारण रावण के हृदय में भी राम का ध्यान हो गया। जब युद्ध हो रहा था तो विभीषण ने राम से कहा कि रावण के वध के लिए उसके हृदय में बाण मारो जिस से अमृत निकल जाये और रावण की मृत्यु हो सके ।

दुविधा में उलझे हुए राम ने कहा कि भक्त विभीषण एक समस्या हैं बाण कैसे मारा जा सकता है। उसके हृदय में शिव का ध्यान हैं और राम शिव पर बाण नहीं चला सकते। दूसरे उसके हृदय में सीता का ध्यान है। यदि वह रावण के वध के लिए बाण चलायेंगे तो सीता भी मर जायेगी और सीता के मरने से उसके हृदय में बसे राम भी मर जाएँगे। राम में ब्रह्माण्ड समाया है तो राम के साथ ब्रह्माण्ड में प्रलय हो जायेगी। बह्माण्ड भी नष्ट हो जायेगा। यही कारण है कि वह रावण के हृदय में बाण नहीं मार रहे हैं।

सज्जनो, यह है ध्यान कि महानता। अन्त में जब योग माया द्वारा रावण का ध्यान शिव और सीता से हटाकर अहंकार वश अपने बल पराक्रम तथा धन की ओर चला गया तब राम ने एक ही बाण से रावण को गिरा दिया। किन्तु ध्यान स्थित रहने तक काल भी रावण से दूर रहा। ऋषियों की उम्र बड़ी होने का भी यही कारण था कि ऋषियों के हृदय में नारायण का ध्यान होने के कारण काल प्रवेश नहीं कर सकता था। यही कारण है कि ऋषियों की हजारों वर्ष तक मृत्यु ही न होती थी। जब उनका स्वयं चोला बदलने को दिल चाहता था तब चोला बदल लेते थे।

अब आपने ध्यान की महानता को भली प्रकार से समझ लिया होगा। ध्यान से सिद्धि, ध्यान से प्राप्ति और ध्यान से मुक्ति है। ध्यान की दृढ़ता ही भक्ति का पूर्ण लक्षण है। इसलिये ध्यान में पूर्ण रुप से स्थिर हो जाओ बस कल्याण ही कल्याण है। **ओम् शांति! शांति!! शांति!!!** ❋

अमृत प्रसाद :–

जीवन एक सफर है।

प्रातः स्मरणीय पूज्य गुरुदेव अनन्तश्री विभूषित स्वामी परमज्ञानानन्दपुरीजी महाराज का यह प्रवचन पटियाला, पंजाब में दिनांक १८–०९–१९७५ को दिया गया था। ''विद्या हासिल करने का मतलब है विवेक प्राप्त करना। विवेक का फल है वैराग्य। विद्या पढ़कर यदि विवेक और वैराग्य जग जाए तो इसी जन्म में ईश्वरत्व की प्राप्ति संभव है। यदि यह बात संभव नहीं हुई तो तुम गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी शास्त्र सम्मत कर्म करते जाओ। तुम संसार में रहो मगर संसार तुममे न आने पाए। नाव पानी में रहे मगर पानी नाव में न आने पाए। तुम अपनी स्त्री या बाल–बच्चों में रहो, अपनी सामर्थ्य के अनुसार उनका पालन– पोषण करो। उन्हें योग्य बनाओ, क्योंकि वे भगवान के बच्चे हैं और तुम अपने को उन बच्चों का चौकीदार या पहरेदार समझकर उनकी देखभाल करो। –सम्पादक!

गुरुमुखो, बोलो हरिओऽम्! हरिओऽम्! हरिओऽम्!

आदमी सत्संग सुनता है। वह जितना सुनता है उसका सौवाँ हिस्सा भी करना शुरू कर दे तो उसके जीवन का उद्धार हो जाए। हाथी के दाँत दिखाने के और, खाने के और ही होते हैं। महापुरुषों ने कहा– **'सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात, न ब्रूयात सत्यमप्रियम्।'** अर्थात् सत्य बोलो मगर प्रिय बोलो। अप्रिय सत्य मत बोलो। जीवन के दो पहलू होते हैं– एक व्यावहारिक और दूसरा पारमार्थिक। दोनों को एक में मिला दोगे तो दोनों बिगड़ जाएँगे। लोक में भी गड़बड़ हो जाएगा और परलोक भी बिगड़ जाएगा। व्यवहार की बात व्यवहार के लिए और परमार्थ की परमार्थ के लिए होती है।

दो महात्मा थे। एक ने कहा, सत्य बोलो पर दूसरे ने कहा, सत्य बोलो मगर उसमें कुछ मिलाकर बोलो। दोनों अपने–अपने सिद्धांत की परीक्षा करने चले। वे एक कुएँ पर गए जहाँ माताएँ पानी भर रही थीं। एक ने कहा, 'माता जी, थोड़ा पानी पिला दो।' उसने बड़े प्रेम से पानी पिलाया। दूसरे ने कहा, 'मेरे बाप की औरत, जरा पानी पिला दो।' औरतें घड़ा लेकर उसे मारने को दौड़ी। महात्मा बोला, 'अरे क्या हो गया ? उसने भी तुम्हें माँ कहा और तब तुमने बड़े प्यार से पानी पिलाया। मैंने जब तम्हें असली माँ बनाया, बाप की औरत कहा तो क्यों गुस्सा कर बैठीं ? क्या बाप की औरत माँ नहीं होती ?'

बाद में जब दोनों एक जगह इकट्ठे हुए तो पहले ने पूछा, 'कहो सत्यवक्ता जी, क्या हाल है? अप्रिय सत्य बोलने का परिणाम पता चला ?' तो व्यवहार की बात अलग होती है। सत्य प्रिय ही बोलना चाहिए। परमार्थ किसी का नहीं बिगड़ा, व्यवहार को लेकर ही बड़े–बड़े लोग चक्कर में पड़ जाते हैं। व्यवहार की गिरावट से परमार्थ में भी गिरावट आ जाती है। चाहे कोई नरक में ही रहे, आत्मदृष्टि से उसका कुछ भी नहीं बिगड़ता। दीपक चाहे देवता के मन्दिर में जलाओ या कसाईखाने में, उसका क्या बिगड़ेगा ? उस प्रकाश को कोई दोष नहीं लगेगा। इसी प्रकार आत्मा चाहे नरक में जन्म ले या राजा के यहाँ, इससे उसमें कोई कमी नहीं आती। आत्मवेत्ता होना बहुत बड़ी बात है। एक बार भगवान शंकर के पास चार ऋषि गुजर रहे थे–सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार। वे चारो महात्मा अपने ख्याल में इतने महब थे कि उन्हें प्रणाम करने का ख्याल ही नहीं रहा। उन्होंने भगवान शंकर को प्रणाम नहीं किया। माता पार्वती शंकर के समीप बैठी थी। उन्होंने सोचा कि ये ऋषि बडे अहंकारी

हो गए हैं, इसलिए इन्होंने भगवान् को प्रणाम नहीं किया। भगवान् शंकर भी अपने ख्यालों में महव थे उन्हें इसकी कोई खबर नहीं थी। माता पार्वती ने सोचा कि इन्हें श्राप देना चाहिए। उन्होंने कहा, 'तुम लोग कोचवान हो जाओ।' वे हाथी चलानेवाले कोचवान हो गए। एक दिन हाथी पर बैठे जा रहे थे। उनके हाथों में लोहे के अंकुश थे। पार्वतीजी रूप बदलकर उनके सामने आईं और पूछा, 'कहो जी, क्या हाल है ?' ऋषि बोले कि बहुत अच्छा हाल है। पार्वती पुनः बोलीं, 'तुम पहले ऋषि थे, सब जगह तुम्हारी पूजा होती थी। अब हाथी हाँक रहे हो और कह रहे हो कि बड़े मजे में हैं ?' वे बोले, 'इसमें क्या बिगड़ गया ? हम जो पहले थे वही अब भी हैं। केवल बाहरी रूप ही बदला है। नाटक में कोई रंगमंच पर पहले चौकीदार और बाद में राजा बनकर आता है, इससे उसमें क्या फर्क पड़ता है? पार्वती ने सोचा कि कोचवान बनने पर भी इनका कुछ नहीं बिगड़ा। ये अब भी उसी तरह प्रसन्न हैं। उन्होंने फिर शाप दे दिया, 'तुम लोग ऊँट हो जाओ।' वे ऊँट बन गए। अब ये चारों के चारों सड़क से कहीं जा रहे थे। इनकी लम्बी गर्दन थी जिससे पीपल के पत्ते नोचकर खा रहे थे। पार्वती ने पूछा 'क्या हाल है ?' उन्होंने कहा, 'पहले से भी अच्छी हालत है। न नहाने की फिक्र है, न धोने की। पत्ती खाते हैं और मस्त घूमते हैं।' पार्वती ने सोचा कि हद हो गई ! इनका तो कुछ बिगड़ता ही नहीं। वे शंकर के पास जाकर बोलीं, 'मेरे शाप के कारण वे कोचवान बन गए, फिर ऊँट बने और अब भी मस्ती में हैं। कहते हैं, हम पहले से भी ज्यादा सुखी हैं। भगवान बोले, 'वे आत्मवेत्ता है। उनका कुछ नहीं बिगड़ सकता। वे अपने को आत्मा समझते हैं, शरीर नहीं। आत्मा सुख स्वरूप है। उनकी दृष्टि में शरीर तो एक खेल है। इस खेल से उनका कुछ बिगड़नेवाला नहीं।'

इसी प्रकार चाहे तुम बिल्ली बनो, राजा बनो, चाहे कंगाल बन जाओ, रोगी बन जाओ या पहलवान, इससे तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ता। असल बात यह है कि व्यवहार के बिगड़ने से दुनिया की व्यवस्था में गड़बड़ी आ गई। यह हमारा लड़का है और यह हमारी लड़की, यह हमारी जाति का है– ऐसे ही झगड़ों में हम उल्लझे हुए हैं लेकिन ये व्यावहारिक बाते हैं। हम शरीर तो हैं नहीं, विशुद्ध आम्मा हैं। गलती से हम अपने को शरीर मान बैठे हैं। ऐसा मानने से शरीर की मान्यता के साथ जो बातें जुड़ी हुई हैं, वे लागू हो जाती हैं। इसी के फलस्वरूप शरीर द्वारा जो कर्म किए जाते हैं, वे हम पर भी लागू हो जाते हैं। कर्म हम जितना करें, वे सभी शरीर से ही तो होते हैं। पाप कर्म और पुण्य कर्म क्या हैं? यह तो धारणा की बात है। एक जिसे पाप कहता है, दूसरा उसे ही पुण्य मानता है। हम कहते हैं कि गाय की पूजा करनी चाहिए, उधर मुसलमान कहते हैं कि गाय को काटने और खाने से सबसे बड़ा पुण्य होता है। गाय की बलि देने से देवता सबसे ज्यादा खुश होते हैं। प्रश्न है, कौन गलत है? या तो मुसलमान नरक जाएँगे या हिन्दू। अब समझने की बात है कि पाप और पुण्य किस प्रकार परिभाषित किए जाएँ।

हम कहते हैं कि मामा की लड़की से ब्याह करना पाप है। मुसलमान कहते है कि मामा की लड़की से शादी करने जैसा श्रेष्ठ कोई रिश्ता होता ही नहीं। उनके यहां चाचा और मामा की लड़की से शादी करना सबसे उम्दा माना जाता है। हम पूजा करते वक्त चुपचाप बैठ जाते हैं। वे अपनी प्रार्थना के समय कभी घुटने टेकते हैं, कभी कान पकड़ते हैं और कभी लेट जाते हैं। हमारे चौके में यदि बाहर से कागज भी उड़कर चला जाए तो छूत हो गई और अंग्रेजों के यहाँ जूते पहनकर ही खाते हैं। तब ये मुसलमान नरक जाएँगे या अंग्रेज या हम ? इनमें से कोई एक तो नरक जाएगा ही। हमारे यहाँ पंडित रोज नहाते है, उधर बर्फ के

मुल्कों में रहने वाले लोग जीवन भर में तीन बार नहाते हैं– एक, जिस दिन जन्म होता है, दूसरा, जिस दिन ब्याह होता है और तीसरा, जिस दिन मरते हैं। वहाँ बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जो जीवन भर में एक बार भी नहीं नहाते। तो क्या सब नरक जाएँगे ? वस्तुतः ये सारी की सारी व्यावहारिक बातें हैं। मन को बनाने के लिए लोगों ने ऐसी प्रक्रियाएँ बना डालीं। हम अपने खाने में मांस–मछली को वर्जित समझते हैं, उधर बर्फ में रहनेवाले निरामिष रहें तो उनका जीना ही मुश्किल हो जाए। उनके यहाँ तो बकरों के अलावा कुछ होता ही नहीं। हम लोग जिस प्रकार रोटी के साथ सब्जी खाते हैं, उसी तरह वे मांस खाते हैं। उनके यहाँ रोटी चटनी की तरह खाई जाती है, चूंकि वहाँ आँटा होता ही नहीं। अब बताओ, इसमें क्या पाप हुआ और क्या पुण्य? महापुरुषों ने कहा है–

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ।।

वेदव्यास जी के अनुसार जिस काम से दूसरे का भला हो, दूसरे सुखी हो वही पुण्य है और जिससे दूसरों को पीड़ा पहुँचती हो, वही पाप है। किसी के भी मन, वचन, कर्म से दुख पहुँचाना पाप है। वचन और कर्म से अहित करना तो दूर, मन से भी अहित सोचना पाप है। आम तौर पर संसार में बाहर के भले ही लोग कुछ न कहें मगर मन में तो अहित सोचते ही हैं।

तो इस गुत्थी को सुलझाना बड़ी मुश्किल का काम है। इससे वाद–विवाद और तर्क–वितर्क की बड़ी गुंजाइश हो गई है। मान लो, तुम बकरे नहीं खाओगे मगर साग–सब्जी तो खाओगे? शहर में जो साग–सब्जी उपजाई जाती है उसे उस पानी से पटाया जाता है जो शहर की तमाम गन्दी नालियों से इकट्ठा होकर जाता है। तुम गन्दे नाले का पानी कभी छूना भी नहीं चाहोगे। मगर उसी के पानी से उपजाई गई गोभी और आलू खूब खाते हो। प्रश्न है शुद्ध और अशद्ध का निर्णय कैसे हो ?

एक पंडित तीर्थ करने चला। वह कबीर की तुम्बिया को भी तीर्थ करवा लाया। लौटकर उसने कबीर को उनकी तुम्बिया वापस कर दी। कहा, 'इसे सभी तीर्थों में नहला लाया हूँ।' कबीर बोले, 'आज हमारे यहाँ आपकी दावत है। भोजन यहीं कीजिएगा।' पंडित बोला, 'हम तुम्हारे हाथ का भोजन कैसे करेंगे ?' कबीर ने जवाब दिया, 'आप स्वयं खाना पका लें, मैं सभी सामान दे देता हूँ।' पंडितजी ने बगीचे में भोजन बनाना पसन्द किया। कबीर ने चूल्हे के साथ सभी सामान दे दिया। पंडित ने भोजन पकाया और जब खाने का वक्त आया तब कबीर ने उनकी सब्जी में अपनी तुम्बिया काटकर डाल दी। तुम्बिया कड़वी थी। खाते समय पंडित बोला, 'यह कैसी शरारत ?' कबीर बोले, 'महाराज, यह वही तुम्बिया है जिसे तीर्थाटन कराकर लाए हो। मैंने सोचा कि अब यह मीठी हो गई होगी।' पंडित बोले, 'भला नहलाने से कड़वी तुम्बिया मीठी कैसे हो जाएगी ?' कवीर ने उत्तर दिया, 'पंडित जी, जब सभी तीर्थों में स्नान करके भी तुम्बिया की कड़वाहट नहीं गई तो आपके मन का कड़वापन भला क्या दूर होगा ?' पुनः आपने शुद्ध स्थान समझकर यहाँ अपना जो भोजन पकाया है, वहाँ की हाथ भर जमीन खोदकर जरा देखिए तो सही।' जमीन खोदी गई तो सुअर आदि जानवरों की हड्डियाँ मिलीं। पंडित जी का. कुल पाखण्ड चूर हो गयी।

तो, ये सब बाहर की बातें हैं। इनमें असलियत कुछ भी नहीं। हमें तो अपने मन को आहिस्ते–आहिस्ते रास्ते पर लाना है। हमारी जो अपनी संस्कृति है. उसी के मुताबिक चलने से हमारा उद्धार सम्भव है। तुम हिन्दू हो तो हिन्दू संस्कृति के अनुसार अपने जीवन को ढालो। तुम्हें इन झगड़ों में नहीं पड़ना है कि मुसालमान मूर्ति पूजते हैं या नहीं। तुम्हारे सनातन धर्म में मूर्ति पूजा का विधान है। अतः तुम मूर्ति की पूजा करो, तीर्थस्नान करो मगर समझकर करो जैसा विधान है वैसा करो।

लोग कहते हैं कि गृहस्थी में बड़ा उलझन है। मेरी समझ से उसमें कोई उलझन दिखाई नहीं देता। तुम तो बेकार के बहाने बनाते रहते हो। गप्प मारते हो, ताश–चौपड़ खेलते हो। औरतें इकट्ठी होकर फिजूल ही दूसरों की निन्दा करती है। तुममें से कौन ऐसा आदमी है जो चौबीसों घण्टे काम करता है? अगर तुम अपने व्यवहार को शुद्ध कर लो तो तुम्हारा परमार्थ स्वतः सुधर जाएगा। व्यवहार में अशुद्धि आने से परमार्थ विकृत हो जाता है। तुम गृहस्थ हो। तुम्हारे घरों में जो भजन हो सकता है वह जंगल में नहीं हो सकता। तुम घर में हो तो खुद लकड़ी जलाई, फट चाय बना डाली और पी ली। उधर जो बाबा जंगल में है वह नदी–किनारे बैठकर स्नान–पूजा करके भी अपने दिमाग को चाय की प्याली में लगाए बैठा है। लगा लो हिसाब, तुम यहाँ से सत्संग सुनकर जाओगे और मच्छरदानी लगाकर सो जाओगे। अब उस बाबा से पूछो जो पेड़ के नीचे आसन लगाकर बैठा है। क्या वह नहीं सोचता होगा कि मच्छरदानी होती तो अच्छा था ? तुम्हारे पास घर–गृहस्थी के सामान हैं। मैं यह नहीं कहता कि ये सामान तुम्हारे पास न रहें। सामान हों मगर उसमें आसक्ति न हो। यह कहना तो आसान है मगर करना बड़ा मुश्किल है। आसक्ति हटेगी कैसे ? इसे धर्म–मार्ग पर चलकर ही दूर किया जा सकता है। तुम जब तक शरीर में रहोगे, संकल्प–विकल्प होते ही रहेंगे। हाँ, समाधि में चले जाओगे तो संकल्प–विकल्प मिट जाएँगे। फिर जैसे ही समाधि से उठोगे, संसार का प्रपंच शुरू हो जाएगा और संकल्प–विकल्प पुनः उठने लगेंगे।

कोई लड़का सालभर विद्यालय में पढ़ता है। उसकी पढ़ाई कैसी चली, इसका पता उसके इम्तहान से चल जाता है। दुनिया के हर काम का इम्तहान होता है। तुम कितना सच बोलते हो और कितना झूठ, इसका पता व्यवहार से ही चलेगा। जंगल में तो कोई है नहीं, अतः वहाँ इसका पता पाना बड़ा कठिन है। जंगल में कोई सत्यवक्ता क्या करेगा ? उसकी सच्चाई का पता तो बाजार में सौदा करते वक्त लगेगा कि वह सच बोलता है या झूठ। जंगल में तो अकेले ही रहना है। वहाँ सच और झूठ की परख होगी तो कैसे? इसलिए इसी दुनिया में सबकी परीक्षा होती है। तुम अपने सामाजिक जीवन में रहकर अपने व्यवहारों की शुद्धता की कसौटी पर कसो और उन्हें धीरे–धीरे करते जाओ।

तुम भजन करने की बात करते हो। वस्तुतः बैठकर माला फेरना ही भजन नहीं है। रोटी पकाना भी भजन है, बच्चों को खिलाना, कपड़े धोना, नहाना, यह सब भजन हैं। मगर इन सबको ठीक से समझकर करो तभी ये भजन हो सकते हैं। हिन्दू संस्कृति में यह नियम है कि जब माताएँ घर में रोटी पकाती हैं तो पकाने के पहले आँटा या चावल के कुछ हिस्से को निकालकर चिड़ियों को दे देती हैं। इससे भोजन बनाने के लिए दिए गये आँटे या चावल में कोई फर्क नहीं पड़ और भाव भी शुद्ध हो गया। तुम इस भाव से भोजन मत बनाओ कि हमें खाना है। रसोईं पकाते वक्त ऐसा भाव लाओ कि भगवान का प्रसाद बन रहा है, इसका भोग लगाकर सबको बांटा जाएगा। हाथ–पैर से तुम जो भी काम करते हो, जैसे आँटा गूंथना, सब्जी काटना या ऐसा कोई भी काम करना, उस समय मन ही मन भजन करते रहो। यहाँ होता तो यह है कि चूल्हे को सुलगाकर घर में लड़ाई शुरू कर दी जाती है, गालियाँ बकी जाती हैं, और साथ–साथ खाना भी पकता रहता है। बताओ, वह प्रसाद क्या खाक बनेगा। इस तरह तुम चाहो तो गृहस्थी के सारे कार्यों को अपना भजन बना लो। यदि तुम्हारे भाव ठीक न होंगे तो आसन लगाकर माला जपने से भी भजन नहीं हो पाएगा। तुम्हें अपना कल्याण स्वयं करना है। यदि किसी के करने से कल्याण होना होता तो मैं तुम सबका कल्याण कर देता। रोटी स्वयं खाने से पेट भरता

है। रोटी पकाकर देखते रहो तो पेट नहीं भरेगा। घर त्यागकर साधु बनने से भी कुछ नहीं होता। वहाँ भी आत्म–कल्याण के लिए कुछ आवश्यक शर्तें हैं जिन्हें मानकर चलने से भला हो सकता है, अन्यथा वहाँ भी झगडों में ही लगे रहोगे।

महापुरुषों ने हमारे लिए जो बातें कही हैं, इनका उद्देश्य है हमें अनुशासित करना, डराना और पुनः प्रोत्साहित करना। उनकी बातें तीन तरह की होती हैं– रोचक, भयानक एवं यथार्थ। यथार्थ बात यह है कि तुम्हें मानव तन ईश्वर की प्राप्ति के लिए, आत्म–साक्षात्कार के लिए मिला है। हमारी वृत्तियाँ बहिर्मुखी होती हैं और आत्मा हमारे अन्दर है। इन्द्रियों की खुराक बाहर संसार में है, इसलिए मन बाहर ही बाहर दौड़ता रहता है। वह अन्दर जाता तो उसे वहाँ के आनन्द का कुछ पत्ता लगता। महात्मा लोग तुम्हारे मन को धीरे–धीरे रास्ते पर लगाते हैं। वे बताते हैं कि अमुक काम से पाप और अमुक से पुण्य की प्राप्ति होगी। उनका कहना है कि पाप करने से नरक मिलता है और नरक में महान कष्ट झेलना पड़ता है। वहाँ आग में झोंका जाता है, कड़ाह के उबलते तेल में डाला जाता है। वहाँ बड़े भयानक यमदूत रहते हैं। यदि तुम उनके डर पैदा करने से भी रास्ते पर नहीं आते तो वे तुम्हें लालच देते हैं कि अच्छा काम करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है। स्वर्ग में सोने के महल हैं, देवता हैं, कल्पवृक्ष हैं। इस प्रकार तुम डर से या लालच से, किसी तरह तो मान ही जाओगे। शास्त्रों के कथन का यही ढंग है।

विद्या हासिल करने का मतलब है विवेक प्राप्त करना। विवेक का फल है वैराग्य। विद्या पढ़कर यदि विवेक और वैराग्य जग जाए तो इसी जन्म में ईश्वरत्व की प्राप्ति संभव है। यदि यह बात संभव नहीं हुई तो तुम गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी शास्त्र सम्मत कर्म करते जाओ। तुम संसार में रहो मगर संसार तुममें न आने पाए। नाव पानी में रहे मगर पानी नाव में न आने पाए । तम अपनी स्त्री या बाल–बच्चों में रहो, अपनी सामर्थ्य के अनुसार उनका पालन–पोषण करो। उन्हें योग्य बनाओ, क्योंकि वे भगवान के बच्चे हैं और तुम अपने को उन बच्चों का चौकीदार या पहरेदार समझकर उनकी देखभाल करो। यहाँ तो पहले ही दावा जमा बैठे हो कि ये तुम्हारे ही बच्चे हैं। दावा मत जमाओ। तुम्हारी तो अजीब स्थिति है। जब तुम्हारे स्वार्थों की पूर्ति नहीं होती तो हल्ला मचाने लगते हो। तुम यहाँ आश्रम में आए हो। यहाँ हम चाहे तुम्हें कितना भी आराम दें, प्यार दें, फिर भी तुम्हारा मन घर जाने को ललचेगा ही। ऐसा क्यों? यहाँ तुम कर्तव्य पालन करने के लिए आए हो और वहाँ तुम्हारा मोह है। मरने के बाद कोई रस्सी नहीं होती जिससे किसी को बन्धन में डाल दिया जाता हो, जीवित में यह मोह ही तुम्हें बांधता है और पुनः–पुनः जन्म लेने को बाध्य करता है। मोह के रहते हुए कोई भी शक्ति तुम्हें जन्म लेने से नहीं रोक सकती।

किताबें पढ़ते हो, सत्संग सुनते हो फिर भी तुम्हारा रोना वैसा ही है, हाय–तोबा वैसी ही है। जब तुम जान ही चुके कि यह संसार मिथ्या है, इसे छोड़ ही जाना है तो इसके बिगड़ने से घबराते क्यों हो? हरिश्चन्द्र से ज्यादा तो कुछ होगा नहीं। जो लोग यह कहते हैं कि उनका कुछ भी नहीं बना तो यहाँ बना किसका ? सबका तो बिगड़ ही गया। **यह जीवन तो एक सफर है।** रास्ते में यदि अच्छा साथी मिल गया तो यात्रा हँसते–खेलते कट गई और यदि शैतान मिल गए तो रोते–रोते गुजारनी पड़ी। तब भी –

गुजरी कुछ तकलीफ में या गुजरी अच्छी जिन्दगी।
हर तरह कट जाएगी इन्सान की यह जिन्दगी।।

महलों में रहने को मिले या झोपड़ियों में, कोई किम्ख्वाब, मखमल, अतरस या जर्री पहने अथवा केबल लंगोटी पहनकर रहे, मेज पर छत्तीस व्यंजन खाएँ या सूखी रोटी खाकर प्राण रक्षा करे, इससे क्या फर्क पडता है? यह तो चंद मिनटों और

चन्द दिनों का खेल है। अन्त में तो दोनों बराबर हो जाते हैं– **खाक में जब मिल गये, दोनों बराबर हो गए।** भगवान का न्याय भी कुछ ऐसा है कि जो खूब ठाट का खाना खाते हैं वे अक्सर बीमार रहते हैं। तन्दुरुस्ती गरीबों को मिलती है और बढ़िया खाना अमीरों को। लोग खाना इसीलिए खाते हैं कि वे खूब तगड़े हो जाएँ। मगर तगड़े तो मजदूर होते हैं, अमीर शायद ही कोई तगड़ा होता हो। किसी मजदूर से अमीर साहब को लड़ाकर देख लो, वह एक तमाचा मारे तो वे मिट्टी पकड़ लें। अमीर देखने के ही होते हैं स्वस्थ–सुन्दर दम उनमें कुछ नहीं होता। इधर मजदूर तो लोहे के बने होते हैं। अब देखो ईश्वर का फैसला! फिर क्यों रोते हो? मैं नहीं कहता कि तुम अच्छी तरह मत खाओ, अच्छे वस्त्र मत पहनो। मगर जरा विचार कर उपयोग करो। मिले तो भी खुश, नहीं मिले तो भी खुश। तुम तो दूसरों को देखकर ईर्ष्या करते हो कि वे ठाट से खाते–पहनते हैं। अरे, इसमें जलने की क्या बात हो गई? उन्होंने पिछले जन्म में अच्छा कर्म, दान–पुण्य किया होगा। तुम्हें भी जितना मिला है उसमें संतोष करो, अगले जन्म में उससे भी अच्छा मिलेगा। तुम कह सकते हो कि हम गरीब हैं, दान–पुण्य कहाँ से करें। वस्तुतः यह भी तुम्हारे मन का बहाना है। यहाँ अमीरी–गरीबी की कोई बात नहीं। यदि तुम समझ–बूझकर चलो तो तुम्हारा एक रुपया किसी अमीर के एक लाख से बढ़कर है।

युधिष्ठिर जी महाराज का यज्ञ हुआ। उसमें याचक अयाचक कर दिए गए। दान होता था, झोलियों में अशर्फियाँ भरी थीं। लेनेवाले को तबतक दिया जाता था जबतक वह अपनी झोली आप ही समेट न ले। महाराज श्री कृष्ण की कृपा से यह प्रमुख दान संभव हुआ। वहाँ एक नेवला आया। उस समय वहाँ लोग तारीफें किए जा रहे थे कि वैसा दान कभी हुआ ही नहीं। इतने में नेवले ने आदमी की बोली में कहा, 'तुम लोग चुप रहो, कुछ दान नहीं हुआ। इससे बड़ा दान तो वहाँ कुरुक्षेत्र में एक घसियारे ने किया। उसने अपने खुरपे और टूटे हुए जाल का दान किया। उस दान के संकल्प का जो जल गिरा उसमें मैं लोट–पोट करता रहा। फलस्वरूप मेरे आधे शरीर के बाल उजले हो गए। यहाँ तो मैं सुबह से ही उछल–कूद कर रहा हूँ, किन्तु मेरा एक भी बाल सफेद नहीं हो पाया है। फिर क्यों कहते हो कि यहाँ बहुत दान–पुण्य हुआ है?'

तो इसमें भेद क्या था? उस गरीब घसियारे ने शुद्ध मन से, सच्चे दिल से अपना सर्वस्व दान किया था। इसीलिए वह यहाँ के करोड़ों के दान से भी ज्यादा महत्त्व का था। लेकिन युधिष्ठिर के यज्ञ में तो चालाकी हुई थी, चार सौ बीसी हुई थी। जितना दान हुआ था उतना धन तो पाण्डवों के पास था नहीं। वहाँ तो श्री कृष्ण महाराज की युक्ति से यह सब संभव हुआ था। इस युक्ति के अनुसार उन्होने दुर्योधन को भण्डार–घर में रखवा दिया था। उसके हाथ में ऐसी रेखा थी जिसके कारण वह जितना लुटाता, उसका दूना खजाने में बढ़ जाता। उसे पाण्डयों से बैर तो था ही, इसीलिए खूब लुटाए जा रहा था। इस प्रकार वहाँ की दान क्रिया में चार सौ बीसी स्पष्ट थी!

अमीरी और गरीबी की कोई बात नहीं। शुद्ध भाव से दिया गया किसी गरीब का एक गिलास पानी भी महान फल दे सकता है। तुम्हें भी अपने उपार्जित धन से जिस प्रकार दान करने को कहा जाता है वैसा करो तो बड़ी बात बन सकती है। तुम वैसा करोगे ही नहीं तो रोना तो पड़ेगा ही। इसीलिए तो दुनिया रोती है। तुम भगवान के खजाने के पहरेदार मात्र हो। यहाँ दावा मत जमाओ। दूसरे की चीज पर दावा जमाओगे तो मार पड़ेगी। अब हम भगत जी के यहाँ आए। इन्होंने हमारे लिए बिस्तर लगाया, पलंग बिछाया। हम इसका इस्तेमाल चाहे जितना कर लें। इस पर दावा जमाने लगेंगे तो झगड़ा होगा ही। दावा जमाना भी काहे का? कल

उठेंगे, चल देंगे। इसका न हर्ष होगा न शोक। दावा जमाएँगे तभी दुःख होगा। संसार में और कोई दुःख नहीं होता। दावे का ही तो दुःख है। धन भगवान् का दिया हुआ है और हम कहते हैं कि वे हमारे हैं। जब तुम्हारे ही हैं तो रोओ फिर। कल जब बच्चे बीमार होंगे, इन्हें खाना नहीं मिलेगा तो रोया करना सिर पकड़कर, क्योंकि तुमने उन्हें अपना जो बना रखा है। यदि तुम इन्हें भगवान के बच्चे समझते तो रोग मामूली–सी दवा से भी ठीक हो जाता और अब वह हजारों रुपये फूंककर भी ठीक नहीं होता। फिर, उन्हें अपने कर्मों का भोग तो भोगना ही होगा। लेकिन इन बातों में हमारी निष्ठा है कहाँ? यदि निष्ठा होती तो रोना ही नहीं पड़ता।

तुम्हारा जीवन ईश्वर की प्राप्ति के लिए है, आत्मा की प्राप्ति के लिए है। लेकिन आत्मज्ञान तबतक नहीं होगा जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो, वृत्तियाँ सात्विक न बने । अन्तःकरण तब तक शुद्ध नहीं होगा जब तक तुम्हारा व्यवहार शुद्ध नहीं होता। पूजा करने से भी अन्तःकरण मलिन बना रह सकता है। बहुत सारे लोग पूजा अपनी नामवरी के लिए करते हैं। मन्दिर इसलिए बनवाते हैं कि उससे उनका यश बढ़े। ऐसे कर्मों से अन्तःकरण की शुद्धि नहीं हो सकती। यदि मिट्टी का शिव जी बनाकर कोई पूजा करे तो संभव है, उसे ज्यादा फल मिले। यदि व्यवहार शुद्ध हो तो चलते–फिरते, सारे काम–काज करते हुए भी पूजा हो सकती है। जैसे राम, कृष्ण, राजा जनक आदि घर–गृहस्थी में रहकर भी महात्मा थे।

वाह्य कर्म का महत्व भावना के अनुसार होता है। अन्तर के भाव जैसे होते है, फल वैसे ही मिलते हैं। हम गुरु महराजजी के दर्शनों को आए तो भावना कितनी ऊँची लेकर आए, हमारा फल इसी पर निर्भर करता है। जिसकी जितनी ऊँची और दिव्य भावना होती है उसे उतना ही बड़ा फल मिलता है। ऐसी भावना तुम मन्दिर में जाकर बना लो, किसी महात्मा की सेवा करके या सत्संग सुनकर बना लो, यह तुम्हारी अपनी सुविधा की बात है।

जय गुरु, आशीर्वाद!

✦

पत्रिका प्राप्ति हेतु सहयोग राशि

एक प्रति :
25.00 (पच्चीस रु0)
वार्षिक :
251.00 (दो सौ एक्यावन रु0)
त्रैवार्षिक :
751.00 (सात सौ एक्यावन रु0)
पंचवार्षिक :
1251.00(एक हजार दो सौ एक्यावन रु0)
दसवार्षिक :
2551.00(दो हजार पांच सौ एक्यावन रु0)
आजीवन :
5001.00 (पाँच हजार एक रु0)
संरक्षक :
7501.00 (सात हजार पाँच सौ एक रु0)
विशेष संरक्षक :
11111.00 (ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रु0)

नोट :– आजीवन सदस्य का नाम, पता, संरक्षक का फोटो, वायोडाटा तथा विशेष संरक्षक का फोटो, वायोडाटा एवं उनसे संबंधित विशेष परिचयात्मक विवरण पत्रिका में प्रकाशित किया जाएगा। पूर्व में सदस्यता प्राप्त आजीवन सदस्य, संरक्षक एवं विशेष संरक्षक पूर्व में भुगतान की गई राशि वर्द्धित दर से घटाकर शेष राशि का भुगतान कर अपनी सदस्यता अवश्य नवीनीकृत करा लें।

सम्पर्कसूत्र–

7372000511, 7372000512, 7060862109,
9334319012, 9430930168, 8986373548

*

प्रवचन पीयूष :–

'सत्संग से ही भगवद् प्राप्ति संभव है।'

प्रस्तुति– स्वामी अखण्डानन्दपुरीजी

पूज्यपाद ब्रह्मलीन स्वामी भास्करानन्दपुरी जी महाराज के द्वारा यह प्रवचन परमपुरी आश्रम, सासाराम, बिहार में दिया गया था। इस प्रवचन में श्री स्वामीजी महाराज ने यह फरमाया–'एक बार एक चेला ने कहा गुरुदेव भगवान को पाने का कोई सहज ऊपाय है? गुरु ने कहा–हाँ है, बड़ा ही सहज उपाय है। यदि तू कर सको तो अभी कर के देख ले। चेले ने कहा फिर करा ही दें। गुरु ने एक तालाब के पास ले जाकर चेले से कहा– इस तालाब में डुबकी लगायो। जब चेला ने डूबकी लगाया तो गुरु ने उसके सर पर हाथ देकर दबा दिया। वह पानी में डूब कर ऊपर निकलना चाहता था। परन्तु गुरु देव उसके सर को नीचे दबा देते थे वह, बड़ा विकल हो गया। जब वह निकला तो गुरु ने कहा बेटा–जितनी बेचैनी पानी से बाहर आने के लिए तेरे अन्दर थी उतनी ही बेचैनी परमात्मा से मिलने की जब हो जाये तो तुझे अभी वह परमात्मा प्राप्त हो जायेगा।' –सम्पादक!

मेरे प्रभु के प्रेमी भक्तगण! भाई और बहनो!

अभी आप सभी ने प्रेम के साथ कीर्तन के माध्यम से भक्तों और महात्माओं के विचार को श्रवण किया। आप सभी ने बड़ी शांति से सुना। सत्संग सुनना बड़ा अच्छा है। सत्संग वैसी चीज है जिसके लिये तुलसी दास जी ने फरमाया–

'बिनु सतसंग विवेक न होइ।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।'

बिना सत्संग के बुद्धि, विवेक शीलनि नहीं हो सकती है। बुद्धि तो स्कूल और कॉलेजों में भी बनती है, बुद्धि का निर्वाण तो अनेक जगहों में होता है। लेकिन उस बुद्धि के द्वारा वह विवेक शीलनि बुद्धि नहीं प्राप्त होतो है। वह तो सन्तों के सामने जाने से सत्संग के माध्यम से, जो बुद्धि बनती है, उस बुद्धि में वह क्षमता होती है कि वह सत्य और असत्य का विवेक पैदा कर सके। एक बार श्री गुरु महराज जी ने एक कथा के माध्यम से सुनाया– 'एक राजा ने एक सन्त से पूछा– हमें उस परमात्मा का बोध कराओ। उस सन्त को कौन कहे दरबार के सभो आश्रित सन्त थक गये। किसी ने राजा को परमात्मा का बोध नहीं करा सका। आखिर में राजा ने सभी को जेल में डाल दिया। आखिर एक महात्मा आया और वह जौहरी की आंख मांगा। राजा ने जब जौहरी की आँख प्राप्त कर ली तो कहा– गुरुदेव! अब तो हमे वह आँख प्राप्त हो गई, अब तो परमात्मा का दर्शन कराओ। महात्मा ने कहा–अरे, उस आँख को प्राप्त करने के लिए इतना समय लगा। अब मेरो भी सेवा कुछ दिन करो तब वह आँख प्राप्त होगी, राजा ने सेवा करके परमात्म तत्व का बोध प्राप्त की।

सत्संग वह क्लास है, वह विद्यालय है, कालेज और विश्व विद्यालय है जहाँ पर सत्य और असत्य का विवेचना करके सत्यासत्य का ज्ञान कराया जाता है। स्वयं राम ने भी नवधा भक्ति में सेबरी से कहा था, हे सेबरी! मेरि नव प्रकार की भगति है। जिसमें पहली भक्ति है **'प्रथम भगति संतन्ह कर संगा'** अर्थात् जो हमें प्राप्त करना चाहता है वह पहले सन्तों की सेवा करे। भजन में भी गाते है–**जो तू चाहे कि हो घनश्याम की नजर तुझपै पहले, तो उनके आशिकों के खाक पा में कर गुजर पहले।**' इस तरह पहली सीढ़ी पर जब चढ़ोगे तब शेष आठों सींढ़ी पर अनायास ही चढ़ जाओगे। जो लड़का पहले वर्ग में मन लगा कर पढ़ेगा स्वाभाविक ही वह दूसरे में जायेगा। फिर दूसरे में ठीक से पढ़ेगा तो तीसरे में जायेगा। इस तरह वह स्वाभाविक भक्ति के नव डेडे वाली सीढ़ी पर चढ़कर अन्तिम तक पहुँच जायेगा ।

"नवम सरल सब सने छल हीना।

मम भरोस हिय हरष न दीना।"

अर्थात् समत्व, पूर्णत्व की स्थिति में जीव आ जायेगा। आप लोगों को सत्संग में आने की प्रेरणा दी जाती है। क्योंकि भक्ति की भूख सत्संग में ही जगाई जाती है। सच बात तो यही है कि किसी को भगवान् की जरूरत नहीं है। कोई भी ऐसा आदमी नहीं है जिसे भगवान् की आवश्यकता हो। प्रश्न होगा कि ये जितने राम नाम का झण्डा लिए राम नामी ओढ़े फिरते हैं, यज्ञ, जप तप करते हैं क्या वे भगवान् को नहीं चाहते? सच तो है कि भगवान् की माया को सभी चाहते हैं।

माया के सबही चहें, प्रभु को चहै न कोय।
माया तजि प्रभु को भजै, प्रगट प्रभु तब होय।।

एक बार एक चेला ने कहा– गुरुदेव भगवान् को पाने का कोई सहज ऊपाय है? गुरु ने कहा– हाँ है, बड़ा ही सहज उपाय है। यदि तू कर सको तो अभी कर के देख ले। चेले ने कहा फिर करा ही दें। गुरु ने एक तालाब के पास ले जाकर चेले से कहा–इस तालाब में डुबकी लगाओ। जब चेला ने डूबकी लगाया तो गुरु ने उसके सर पर हाथ देकर दबा दिया। वह पानी में डूब कर ऊपर निकलना चाहता था। परन्तु गुरुदेव उसके सर को नीचे दबा देते थे वह, बड़ा विकल हो गया। जब वह निकला तो गुरु ने कहा बेटा–जितनी बेचैनी पानी से बाहर आने के लिए तेरे अन्दर थी उतनी ही बेचैनी परमात्मा से मिलने की जब हो जाये तो तुझे अभी वह परमात्मा प्राप्त हो जायेगा। श्री गुरु महाराज जी फरमाते थे कि तुम लोग जो यहाँ इतने आये हो, कोई ४० वर्ष का कोई पचास तो कोई साठ सत्तर के हो गये हो, क्या तुम लोगों में तीब्रतर वैराग्य है? भगवान् से मिलने के लिए वेचेनी है? नहीं है। उसी बेचैनी उसी भक्ति की भूख जगाने के लिए सत्संग की आवश्यकता है।

श्री गुरु महाराजजी कहते थे कि एक किसान अपनी भैंस के भूल जाने पर भादो की अंधेरी रात में मोटी लाठी लेकर साँप–बिच्छु का भय छोड़ कर अंधड़–पानी में ढूढ़ता फिरता है। उसकी भूख–प्यास सब हराम हो गई रहती है। ठीक उसी तरह से हम सभी अपने अन्दर के राम को ढूढ़ने के लिए अपने अन्दर के राम को जानने के लिए क्या कभी तीब्र वैराग्य होता है? इसीलिये कहा गया है–

बिनु सतसंग न हरिकथा,तेहिविनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद, होहि न दृढ़ अनुराग।।

हम लोग दुनियाँ में रहते हैं। दुनियादारों के संग रहकर काम–क्रोध मद–मोह–लोभादि के रस को चखते है। भक्ति के रस को तो कभी चखा ही नहीं। यदा–कदा सत्संग में जाते है तो वहाँ भक्ति का रस फीका लगता है और दुनियाँ का रस मीठा लगता है। जैसे एक नमक के पहाड़ पर रहनेवाली चींटी मिश्री के पहाड़ पर गई। मिश्री के पहाड़ पर रहने वालो चींटी ने बड़ा सत्कार किया और कहा–बहन आज तू जी भर कर मिश्री खा लो। जब वह नमक की चींटी खाने लगी तो उसे नमक का ही स्वाद आवे। आखिर उसे कहना पड़ा–बहन तू कहती थी कि हमारे यहाँ तो मिश्री का पहाड़ है। बड़ा मीठा होता है, परन्तु हमें तो नमकीन ही स्वाद लगता है। तब मिश्री की चींटी ने कहा–जरा अपनी मुंह तो खोल। जब वह उसकी मुंह खुलवा कर देखी तो उसके कंठ में नमक की डली थी। जिससे उसको मिश्री का स्वाद भी नमक जैसा हो जाता था। मिश्री के पहाड़ पर रहने वाली चींटी ने उसके मुंह को साफ कराया फिर कहा अब खाओ। जब मुंह साफ करके वह मिश्री को खाने लगी तो उसे मिठाश का अनुभव हुआ। ठीक उसी तरह हम सभी माया के चश्मे से स्वार्थ भाव से भक्ति सेबा करते है। जब हम पूरी त्याग भाव से निःस्वार्थ भाव से सेवा करेगें तब हमें उस भक्ति सेवा का रस भगवान् दर्शन के रूप में मिलेगा। अभी तो हमें भगवान् पत्थर और गुरु महाराज मनुष्य ही दिखाई देते है। जब निस्काम सेवा भक्ति होगी तो इन आँखों में प्रभु का दर्शन होगा।

बोल जयकारा–बोल श्री गुरु भगवान की जय।

प्रवचन सुधा :–

मन का कामनारहित होना ही सहज अवस्था

प्रस्तुति– स्वामी प्रज्ञानन्दपुरीजी

पूज्यपाद महामण्डलेश्वर ब्रह्मलीन स्वामी केशवानन्दपुरी जी महाराज का यह प्रवचन दिनांक २१.०३.१९९९ को औरंगाबाद, बिहार में दिया गया था। श्री स्वामी जी महाराज ने अपने इस व्यख्यान में योग की सहज अवस्था के विषय में बताया है– ''सहज समाधि में मनुष्य सारे द्वन्द्वों के पार चला जाता है। यही चेतना की सर्वोच्च अवस्था है। एक और समाधि होती है, जिसमें चेतना अंतर्मन हो डूब जाती है। उस अवस्था में दृश्य जगत् की चेतना समाप्त हो जाती है, क्योंकि साधक का मन ध्येयवस्तु में लीन हो जाता है।' – सम्पादक!

महामना श्री गुरुमहाराज जी की प्यारी संगत
एवं धर्मानुरागी सज्जनों और माताओं!
ऊँ शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

मनुष्यमात्र को सहज अवस्था प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। कबीर साहब भी कहते हैं– **साधो सहज समाधि भली।** यह सहजावस्था क्या है? जिस अवस्था में मन स्वाभाविक रूप में रहता है, ऐसी अवस्था जिसके लिए कोशिश नहीं करनी पड़ती। हमारी साँस सहज रूप में चलती है अर्थात् उसके लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ता। इसी तरह हमारी नाडियाँ भी सहज रूप में ही क्रियाशील रहती हैं। जब स्वाभाविक ही मन शांत रहता है, किसीतरह की चिन्ता परेशान नहीं करती, आदमी दुःख के द्वन्द्वों से मुक्त अनुभव करता है, तो वह सहजावस्था कहलाती है।

सहज समाधि में मनुष्य सारे द्वन्द्वों के पार चला जाता है। यही चेतना की सर्वोच्च अवस्था है। एक और समाधि होती है। जिसमें चेतना अंतर्मन हो डूब जाती है। उस अवस्था में दृश्य जगत् की चेतना समाप्त हो जाती है, क्योंकि साधक का मन ध्येयवस्तु में लीन हो जाता है। जब विकल्प का पूर्ण आभाव हो जाता है, तो इसीको निर्विकल्प–समाधि कहा जाता है। कहा जाता है कि निर्विकल्प समाधि की अवस्था में अधिक–से–अधिक 26 दिनों के भीतर शरीर छूट जाता है। पर सहज समाधि इससे ऊँची अवस्था है। इसमें संसार का हर कार्य करते हुए मन आत्मलीन रहता है। ऐसे योगी के लिए जगत के सारे कार्य प्रारब्धवश ही होते चले जाते हैं, उसे उनके बारे में कुछ भी चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं होती है। जैसे कोई आदमी गाड़ी पर सो गया और उस गाड़ी ने उसे गन्तव्य तक, पहुँचा दिया। यही अवस्था सहज समाधि में होती है।

इसी अवस्था का वर्णन गीता के द्वितीय अध्याय में भी आया है। बुद्धि को जब समाधान प्राप्त हो जाता है, तो सहज अवस्था का अनुभव होता है। अर्थात् इस अवस्था में बुद्धि स्थिर हो जाती है, जिसे गीता में **"स्थित प्रज्ञता"** कहा गया है। कैसी होती है वह अवस्था? अर्जुन को भी इसके बारे में कुछ पता नहीं है. अतः वह श्री कृष्ण से इसकी जिज्ञासा करता है। श्रीकृष्ण अत्यंत सुन्दर ढंग से इस पर प्रकाश डालते हैं, जिसे गीता का निचोड़ ही कहा जा सकता है–

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान पार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येवात्मना तुष्ठः स्थित प्रज्ञस्तदोच्यते।।
(गीता– २–५५)

"अर्जुन! जब व्यक्ति मन में स्थित सारी कामनाओं को त्याग देता है, तब वह आत्मा में ही आत्मा से संतुष्ट होता है और उसे स्थिर बुद्धिवाला कहा जाता है।"

सहजावस्था में मन से सारी कामनाएँ समाप्त हो जाती है कामनाएँ ही हमें आत्मदर्शन से वंचित रखती हैं। यह वह पर्दा है जो प्रभुदर्शन में आडे आता है। जब इच्छाएँ ही समाप्त हो जाती हैं, तो मन सहज शांतावस्था को प्राप्त हो जाता है, जो अवस्था राजा जनक को प्राप्त थी। उनके खजाने तक में आग लग गई, तब भी उन्हें इसकी कोई चिन्ताँ नहीं हुई। सचमुच ऐसा व्यक्ति विदेहावस्था प्राप्त कर लेता है।

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।

शेष पृष्ठ– २७ पर......

नहि दरिद्र सम दुख जग माही

प्रस्तुति– स्वामी पुण्यानन्दपुरीजी

पूज्यपाद ब्रह्मलीन स्वामी तुरीयानन्दपुरीजी महाराज ने इस आलेख में श्री राम चरितमानस के रहस्यों का उद्‌भेदन कर हमारे लिए सहज रूप में उसे जीवन में उतारने का संदेश दिया है। ''सन्त भगवन्त का मिलन ही दरिद्रता को मिटा सकता है। सच तो यह है कि धन से कभी दरिद्रता का नाश नहीं होता अपितु दरिद्रता की और बढ़ोतरी ही होती है। राधेश्याम कवि रत्न ने लिखा है– 'एक हुए तो दस होते, दस हुए तो सौ की इच्छा है। सौ पाकर भी सन्तोष नहीं सहस्त्र हो तो अच्छा है।' बस इसी तरह बढ़ते–बढ़ते राजा के पद पर पहुँचा हूँ। फिर सन्तोष नहीं हो तो, ऐसी यह डायन तृष्णा है।'' – सम्पादक!

यों तो रामचरित मानस की प्रत्येक चौपाई अपने आप में मन्त्र हैं। मन्त्र का अर्थ–जिसे ठीक से जपा जाये अर्थात् उसका अर्थ ठीक से समझकर उसको अपने जीवन में उतारा जाये; तो जिस प्रकार साँप–बिच्छू के जहर से मन्त्र मुक्ति दिलाता है; ठीक उसी प्रकार इस माया रूपी नागिन के जहर से भी दुखित जीव त्राण पा सकता है। जरूरत है उसे ठीक से समझ कर अपने जीवन में चरितार्थ करने की। जैसे यहाँ **"नहि दरिद्र सम दुख जग माही"** का अर्थ लोग कुछ और लगा लेते हैं। सामान्यतः लोग दरिद्रता का अर्थ धन–हीनता से लेते हैं। यदि धन की हीनता ही दुःख है तो धन की प्राप्ति में सुख होना चाहिये था। परन्तु गोस्वामी जी कहते हैं– **"सन्त मिलन सम सुख जग नाहीं।"** भाव यह कि इस संसार में सन्त के मिलन से बड़ा सुख और कुछ नहीं है। यदि धन से सुख होता तो वहाँ लिखा जाता "द्रब्य मिलन सम सुख कछु नाहीं।" ऐसा लिखने में न तो काब्य दोष, न तो छन्द दोष होता है। परन्तु यह न लिखकर लिखा गया– **"सन्त मिलन सम सुख जग नाहीं।"** भाव अब स्पष्ट हो जाता है कि जिसे सन्त की प्राप्ति नहीं हुई है वही दरिद्र है। जिसे सन्त की प्राप्ति हो जाती; भगवन्त की प्राप्ति हो जाती है उसकी दरिद्रता सदा–सदा के लिये नष्ट हो जाती है। जैसे भगवन्त की प्राप्ति पर केवट कहता है–

नाथ आजु मैं काह न पावा।
मिटा दोस दुख दारिद्र दावा।।

उसका जन्म–जन्म का दारिद्रय मिट गया। इस तरह यह स्पष्ट है कि सन्त भगवन्त का मिलन ही दरिद्रता को मिटा सकता है। सच तो यह है कि धन से कभी दरिद्रता का नाश नहीं होता अपितु दरिद्रता की और बढ़ोतरी ही होती है। राधेश्याम कवि रत्न ने लिखा है–एक हुए तो दस होते, दस हुए तो सौ की इच्छा है। सौ पाकर भी सन्तोष नहीं सहस्त्र हो तो अच्छा है।। बस इसीतरह बढ़ते–बढ़ते राजा के पद पर पहुँचा हूँ। फिर सन्तोष नहीं हो तो, ऐसी यह डायन तृष्णा है।।

अब ध्यान देना है दरिद्र कहते किसे हैं? जो कितना हूँ खाये फिर भी सन्तोष न होता हो उसे 'दरिद्र' कहते हैं। हमारी इन्द्रियां भी दरिद्र है। आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा, ये सभी के सभी दरिद्र हैं। इनकी भूख कभी मिटती ही नहीं सदा भूखी ही रहती है। अब इनपर एक एक करके विचार करें।

आँख– अखियाँ हरि दरशन की प्यासी।
देखन चाहत कमल नयन को,
निशिदिन रहत पियासी।। अखिया ०।।

एक रूप के बाद दूसरे रूप को देखना फिर दूसरे से तीसरे को देखती हैं, इसी तरह वह एक से एक रूप को देखते ललचाते ही रह जाती हैं संतुष्ट नहीं हो पातीं। यह सुन्दर दर्शनीय है अरे इससे तो यह सुन्दर ग्रहणीय है, इसी में वह सदा प्यासी की प्यासी ही रह जाती हैं। हाँ वह कब अपनी प्यास मिटा पाती है जब फिर सन्त सद्‌गुरु की प्राप्ति होती है। उनके द्वारा प्रदत्त साधन के द्वारा त्रिकुटि में ध्यान लगा कर अपने अन्दर के प्रयागराज में माधव पद को देखा जाता है, अपने अन्दर त्रिकुटि में अपने इष्ट देव श्री सद्‌गुरु देव

का अवलोकन किया जाता है तब वह जन्म–जन्म की प्यास मिटती है। अपने अन्दर के कमल नयन भगवान को तो सन्त युक्ति बताकर लखाते हैं। इस तरह आँख की प्यास को आँख की भूख की दरिद्रता को गिटा देते हैं। इस तरह यह सिद्ध हुआ–

सन्त मिलन सम सुख जग नाहीं।

कान– कानों से भी एक के स्वर लहरी से दूसरे की स्वर लहरी पर मन्त्र मुग्ध होते रहते हैं। इससे इसका स्वर अच्छा, इससे इसका स्वर अच्छा बस, इसी अच्छा अच्छा की खोज में हम मर जाते हैं। कल की भूख कान की दरिद्रता मिटा नहीं पाते। हाँ, जब सन्त मिलते हैं तो वे बाहर के इस स्वर लहरी की जगह अपने अन्दर की आवाज को सुनने की युक्ति बताते हैं। अपने अन्दर की अनहद नाद को सुनने पर तो सभी बाहर की आवाज फीकी पड़ जाती है। वह स्वनाद को सुनकर आत्मानन्द में ब्रह्मानन्द में मस्त हो जाता है। उसकी कान की भूख कान की दरिद्रता सदा–सदा के लिये मिट जाती है। धन्य है हमारे सन्त सद्‌गुरु देव तभी तो कहा गया–

सुना के नाद अनहद, धन धन्य कर दिया।
निज घरकी सुन आवाज, घर पाके सुख किया।।

नाक– यह भी गन्ध की भूखी है। सदा गन्ध के लिये दरिद्र बनी रहती है। इस गन्ध से यह गन्ध इस गन्ध से यह गन्ध इसी तरह वह गन्ध को लेने में सदा भूखी ही रहती है। वह कभी सन्तुष्ट नहीं हो पाती। हाँ वह तब ही पूर्ण सन्तुष्ट होती है जब सन्त सद्‌गुरु के द्वारा जीव अपने अन्दर के अंतःकारण में अष्टदल को उर्ध्व करने में सफल होता है। **"गुरु कृपा उर्ध्व कमल विकासा"** जब गुरु की कृपा से अपने अंतःकरण के अष्टदल खिलकर उर्ध्व होते हैं तो उसके पराग के मकरन्द, उसके सुरभि से हमारे घ्राणेन्द्रिय तृप्त हो जाती है। सदा–सदा के लिये सन्तुष्ट हो जाती है इस तरह यह सिद्ध हो गया कि नाक की भी दरिद्रता मिटाने में सन्त सद्‌गुरु ही समर्थ हैं।

जिह्वा– जिह्वा के बारे में तो सभी जानते हैं कि वह सदा भूखी ही रहती है। अभी भोजन किया कुछ देर के बाद फिर कुछ खाने की जरुरत हो जाती है। यहाँ तक लोग कहते है– पेट भर जाता है परन्तु मन नहीं भरता। अर्थात् जिह्वा सदा ललचाती ही रहती है। एक के बाद एक पर दौड़ती ही रहती है। उसकी भूख कभी मिटती ही नहीं, उसकी दरिद्रता तो समाप्त ही नहीं होती है। हाँ, जब सन्त सद्‌गुरु की प्राप्ति होती है वे कृपा कर खेचरी मुद्रा द्वारा जिह्वा को ऊपर उलट कर अपने अन्दर के तालु के पास अमृत श्रावी कुण्ड से सम्बन्ध करा देते हैं तब कभी प्यास लगती ही नहीं है। सदा–सदा के लिये प्यास मिट जाती है। जिह्वा की दरिद्रता समाप्त हो जाती है।

चर्म– चर्म का विषय स्पर्श है। यह भी स्पर्शानन्द से कभी तृप्त नहीं होता। गोस्वामी जी ने तो कहा– **"मिटै न काम अगिनि तुलसी की पाय विषय घृत हुते।"** इस चर्म स्पर्शानन्द की तृप्ति कभी किसी की हो ही नहीं पाती है। हाँ जब सन्त की कृपा होती है तो भगवन्त मिलते है। और भक्त भगवन्त के चर्म स्पर्शानन्द की अनुभूति होने पर वाह्य चर्म स्पर्शानुभूति की भूख सदा–सदा के लिये मिट जाती है। स्वयं भूत भावन भगवान् शंकर की अनुभूति है– **जब वे रुद्र देह तजि नेह वक्ष शंकर में हनुमान,** तब वे श्रीराम से जंगल में मिलने पर उनके चरण चर्म और अपने मस्तक के चर्म के स्पर्शानन्द की अनुभूति के बारे में कहते हैं– **प्रभु के चरण कपी के सीसा।**
सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा।।

अर्थात् मगन हो गये। आनन्दित हो गये। उनकी चर्मास्यर्श की दरिद्रता सदा–सदा के लिये समाप्त हो गई। इस तरह यह सिद्ध हो गया कि हमारी दरिद्रता को मिटाने में सन्त सद्‌गुरु ही समर्थ है। हम दीपावली का महान पर्व मनाते हैं। धन लक्ष्मी की प्राप्ति के हेतु ही और वह लक्ष्मी सन्तों के चरणों में आनन्द पाती हैं। सच तो यह है कि वह जब दुनियाँदारों के हाथ में जाती है तो वे खर पोटने लगती है। आप देखते होंगे जब कोई गृहस्थ, व्यापारी रुपया लेता है तो उसे मस्तक पर लगाता है। अर्थात् उसका हाथ सर पर जाता है। भाव वह लक्ष्मी बरबस उसके हाथ सर पीटवाती है हाय हाय मैं इस अभागे दरिद्र के हाथ, पड़ गई पता नहीं मेरी कौन गति करेगा। क्योंकि धन की तीन गति होती है। उत्तम–धर्म के लिए खर्चा

शेष पृष्ठ– २४ पर......

—: जानता हूँ तुम कौन हो? :—

कोई राजकुमार सैर के लिए रथ पर सवार होकर निकला। उसके रास्ते में एक महात्मा पड़ा हुआ था। वह हटने का नाम ही नहीं ले रहा था। राजकुमार की सवारी उसके समीप आकर रूक गयी। राजकुमार तमककर बोला, ''क्यों जी फक्कड़ राम, तुम देखते नहीं कि मेरी सवारी आ रही है? बीच रास्ते मे इस तरह डटे पड़े हो, क्या तुम मुझे नहीं जानते की मैं कौन हूँ?''

फकीर जोर से बोला, ''छोकड़े तुम्हें खूब जानता हूँ कि तुम कौन हो! क्या बताऊँ ?''

राजकुमार बाबा के दुस्साहस पर बड़ा रंज हुआ। उसने कहा, ''हाँ बताओ तो।''

महात्मा ने कहना शुरू किया, ''तुम्हारे पिता को काम—वासना ने सताया तो उसने तुम्हारी माँ से सम्पर्क किया। उस वक्त तुम अपने पिता के शरीर में वीर्य की एक बूँद के रूप में था। सम्पर्क के साथ ही अपनी माँ के गर्भ में आया। वहाँ नौ महीनों तक उल्टा लटकता रहा। विचित्र सजा थी। उस समय तुम माँस का लोथड़ा था। माँ जब खट्टा—मीठा—चटपटा खाती तो वह तुम्हारे शरीर में काँटे जैसा विधता था। तुम छटपटाते थे, पर बेवशी थी। नौ माह बाद तुम खून—पानी—पेशाब, मल—मूत्र से सना हुआ बाहर आया। तब बेखबर खाट पर पड़ा रहता था। सोये—सोये पेशाब—पाखाना करता। उस वक्त तुम्हारे पास वाणी भी नहीं थी जो किसी को बुलाता। सोये—सोये केवल रोया करता एवं हाथ—पाँव हिलाता था। भूख लगने पर कुछ माँग भी नहीं सकता था, सिर्फ रोना आता था। जब कुछ सयाना हुआ तो माँ—बाप के अधीन रहा। दो पैसे की जरूरत पड़ती तो उसके सामने हाथ फैलाता। घर के बाहर जाने लगा तो साथ के लड़कों के साथ खेलने लगा। वहाँ भी अपनी मंडली के चौधरी के धमकावे में रहता। क्या कुछ और भी कहूँ?''

राजकुमार शर्मिन्दा होता गया। उसका गर्व ढीला पड़ता गया। वह रथ से उतरकर जमीन पर आ गया और मूर्तिवत खड़ा खड़ा बाबा को देखता रहा। महात्मा ने पुनः कहना शुरू किया, "और भी अपना परिचय सुनो। जवान हुआ तो इन्दियों का गुलाम बना। फिर ब्याह कराया और नारी का गुलाम बना। यहाँ चाहे जितनी अकड़ लो पर उसके सामने कुत्ते की तरह पूछ हिलाते फिरते हो। उसके सामने तुम्हारी कुल हेकड़ी बन्द हो जाती है।" "कुछ दिनों के बाद तुम्हारी संतान पैदा होगी। तब उसके लालन—पालन से बेचैन रहोगे। उनके सुख—दुख, बीमारी आदि में सुखी—दुखी होते रहोगे। समय पाकर बूढ़े हो जाओगे। मक्खियाँ भिनकती रहेगी। डंडे के बल पर चला करोगे। अपना बल जवाब दे देगा। इन्द्रियाँ शिथिल हो जायेगी। उस वक्त मन में वासना और तेज हो जायेगी। भला बताओ, कैसी दुर्दशा होगी तब ? पुत्र—पौत्र आज्ञाकारी न होंगे और बात—बात में तुम्हें डांटा करेंगे। जिसके लिए जीवन को चर्खा बनाये रखा, जिन्हें बनाने के लिए अपना जीवन गँवाया। वे ही तुझसे बेवफा होंगे। दिन—रात चिन्ता में घुल—घुलकर मरोगे। एक दिन ऐसा भी आयेगा जब जबर्दस्ती यहाँ से सब कुछ छुड़ाकर तुम्हारे प्राण हर लिये जायेंगे। शरीर मुर्दा हो जायेगा। तुम्हें लोग मरघट में जला आयेंगे। उस समय तुम्हें छूने में भी लोग छूत मानेंगे। घृणा करेंगे। मनों लकड़ियाँ तुम्हारे मृत शरीर पर लादकर तुम्हें पूरा—पूरा जलाकर राखकर दिया जायेगा। तब तुम्हारा नामो—निशान भी नहीं बचेगा। बताओ भला, उस जली हुई राख से भिन्न तुम अधिक कुछ भी हो ? तुम बड़े मूर्ख हो जो अपने को बहुत कुछ मानकर ऐंठ से मर रहे हो।"

*

पृष्ठ २३ का शेष भाग.....

जाये, मध्यम स्व साधन के लिये उपयोग में लाया जाये और अधम बुरे कार्य में व्यय किया जाये। सच है उत्तम गति तो शायद ही किसी—किसी बड़ भागि से होती हो। इसलिये लक्ष्मी सर पीटती हैं और सन्तों के चरण पर लक्ष्मी को रखा जाता है। लक्ष्मी सन्तों के चरण में जाकर आनन्दित होती है।

नहिं दरिद्र सम दुख जग माही।
संत मिलन सम सुख कछु नाहीं।।

हमारी लक्ष्मी पूजा हमारी दिवाली, ऐसे सन्त सद्गुरु की प्राप्ति में बीते। हमारी दरिद्रता का इस प्रकार नाश हो। हमारी आसुरी सम्पदाओं का नाश हो दैवी सम्पदा का विकाश हो। श्री गुरु महाराज का डर अन्तर में सदा प्रत्यक्षीकरण होता रहे। यही प्रार्थना है, यह शुभ कामना है। *

श्री गुरु–गद्दी दिवस पर विशेषः–

रूहानी जांनशीन

''जांनशीन दो तरह के होते हैं– एक रूहानी, दूसरा जिस्मानी।'रूहानी जांनशीन स्वामी स्वरूपानन्द जी हैं। उनसे जो कोई सत्संग' करेगा और रूहानी उपदेश लेगा, उसको दोनों जहान् में बरकत मिलेगी– यह हमारी दुआ है। हमारी यह भी आज्ञा है कि स्वामी स्वरूपानन्द जी के दस हजार से भी ज़्यादा उपदेशी होंगे, जो उनसे सत्संग करेगा या उपदेश लेगा, उसको भी बरकत मिलेगी।'' यह हुक्मनामा भक्त खानचन्द जी को भक्त अमीरचन्दजी द्वारा लिखवाकर 03मई सन् 1919 को श्री परमहंस दयाल जी महाराज ने भिजवाया था। –सम्पादक!

मानव सृष्टि के आरम्भ से ही ब्रह्मविद्या, परा विद्या अर्थात् इल्म सीना का विकास एक दिल से दूसरे दिल तक अर्थात सीना–ब–सीना होता रहा है। इसके विपरीत पुस्तकीय ज्ञान अपरा विद्या अर्थात् इल्म सफ़ीना धीरे–धीरे विकसित होता रहा है। शास्त्रीय वाणी की प्राप्ति जो जिज्ञासु को कई अन्य साधनो से हो जाती है, किन्तु ब्रह्मविद्या अथवा इल्म सीना पूर्ण सद्गुरुदेव जी की कृपा से ही साधक को प्राप्त होता है। कथनी ज्ञान और व्यावहारिक ज्ञान में बहुत फ़र्क़ है। महापुरुषों ने जहाँ व्यावाहरिक ज्ञान की प्राप्ति पर ज़ोर दिया है, वहां कथनी ज्ञान को अच्छा नही माना है। ''इल्म–ब–अमल'' अर्थात् कथनी के साथ करनी सोने पर सुहागे का काम करती है। एक पूर्ण सत्गुरु अपने उत्तम अधिकारीं सदा विश्वास से पूर्ण प्रेमी शिष्य को इस ब्रह्मविद्या का ज्ञान देता है। विवेक, वैराग्य, षट्, सम्पत्ति और मुमुक्षता आदि चार साधनो सें संम्पन्न जिज्ञासु ही इस आध्यात्मिक धन का अधिकारी होता है। यह तो देने वाले के मौज पर निर्भर है वह किसे देता है? आदि शंकराचार्य के शास्त्र ज्ञान से सम्पन्न कई योगी शिष्य थे, परंतु उनकी कृपा दृष्टि के पात्र केवल पद्माचार्य ही बने। हज़ारों–लाखों शिष्यों में गुरु नानक देव जी को एक अंगद जी ही मिले। जैसे पिता बड़ी परिश्रम से कमाई हुई धन सम्पत्ति को अपने योग्य पुत्र के हाथों सौंपकर निश्चिन्त हो जाता है। ठीक इसी प्रकार कठिन तपश्चर्या और घोर योग साधना द्वारा संचित रूहानी दौलत को ब्रह्मवेत्ता सतगुरु अपने परम प्रिय शिष्य को सौप कर सुख की श्वांस लेता है। आध्यात्मिक जगत के सम्राट श्री परमहंस दयाल जी को जब श्री महाराजजी मिले तो उन्होंने भी ऐसे ही आनन्द का अनुभव किया।

श्री परमहंस दयालजी के आदेशानुसार श्री महाराजजी सीमा–प्रान्त के नगरों और गाँवो में जन कल्याण के लिए सत्संग–प्रचार कर रहे थे। तब एक दिन श्री परमहंस दयालजी ने अपनी मौज से आपको टेरी में बुलवाया। श्री महाराजजी टेरी के कृष्णद्वारा में आकर आसीन हुए। श्री परमहंस दयालजी भक्त अमीरचन्द जी के घर विराजमान थे। आप अपने सद्उपदेशों से टेरी निवासी प्रेमियों का उद्धार कर रहे थे। एक दिन श्री परमहंस दयालजी ने भक्त श्री रामचन्द्र जी स्वामी निजमुक्तानन्द जी को आज्ञा दी। कि ''आज से प्रत्येक रात्रि को जबकि सब लोग अपने–अपने घरों में सुख निद्रा में सो रहे हो, उस समय हमारे पास बाबा स्वरूपानन्द जी को कृष्णद्वारा से बुलवाकर यहाँ लाया करो।'' आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए भक्त रामचन्द्र जी प्रत्येक रात्रि श्री महाराजजी को कृष्णद्वारा से बुला लाने लगे। एकान्त में श्री परमहंस दयालजी श्री महाराजजी को फ़क़ीरी राज़, रूहानी दौलत अर्थात् आध्यात्मिक धन बख़्शने लगे। जगत् कल्याण हेतु भविष्य के क्रार्यक्रम बनने लगे। आनेवाले समय में जो आध्यात्मिक क्रांति श्री महाराज जी ने अपने जन जीवन में लानी थी, उसकी रूप–रेखा तैयार होने लगी। लगभग रात्रि 10 बजे से ब्रह्ममुहूर्त तक इन दोनों दिव्य महापुरुषों में विचार–विमर्श होता रहता था। सारी–सारी रात जागकर यह दो दिव्य शक्तियाँ आध्यात्मिक उन्नति और लोक कल्याण के लिए विचार करती रहती थी। ऐसा जानिए कि सकल संसार मोहनिद्रा में सो रहा था। उसे जगाने के लिए श्री महाराज जी के रूप में आध्यात्मिक सूर्य उदय होने की तैयारी कर रहा था। पाँव फटने से पहले ही

श्री महाराज जी कृष्णद्वारा पहुँच जाते थे। श्री महाराज जी उन दिनों श्री परमहंस दयालजी के कई शिष्यों के साथ कृष्णद्वारा में रहते थे। यह कार्यक्रम कई दिनों तक चलता रहा। तब कृष्णद्वारा में निवास करने वाले महात्माओं तथा कुछ विशेष भक्तों को भी इस रहस्य का पता चल गया और श्री परमहंस दयालजी निजधाम सिधारने की तैयारी कर रहे हैं और अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी भी नियत करना चाहते हैं अब तो दो रूप एक हो चुके हैं कई बार श्री परमहंस दयालजी आवाज देतेः– ''भईया, परमहंस, स्वामी स्वरूपानन्द जी कहाँ है? उन्हें बुलवा लाओ।'' इस प्रकार संकेत ही संकेत में रहस्य खुलने लगे। किंतु कुछ भक्त कह देते कि श्री परमहंस दयालजी केवल हँसी में ही इनको परमहंस बुलाते है वास्तव वह परमहंस स्वयं ही हैं, प्रकृति के भेद कौन जाने? संत कबीर जी का कथन हैः–

सत्गुरु शिष्य् का आत्मा शिष्य सतगुरु की देह।
लखा जो चाहे अलख को, इन ही में लख ले।।'

श्री परमहंस दयालजी ने निजधाम सिधारने से दो मास पूर्व टेरी में एक आज्ञा पत्र भक्त खानचन्द जी को भक्त अमीरचन्द जी द्वारा लिखवाकर तीन मई, सन् 1919 को भिजवाया। उस पत्र में श्री परमहंस दयाल जी ने यह वचन लिखवाये–

प्रिय खानचन्द जी,

सप्रेम आशीर्वाद!

आप सब पुराने तथा नये सत्संगियों पर प्रगट कर दें कि हमारा यह इर्शाद है कि उत्तराधिकारी (जॉनशीन) दो प्रकार के होते हैं– एक शारीरिक (जिस्मानी) दूसरा आध्यत्मिक (रूहानी)। जिस्मानी जॉनशीन तो बाबा विशुद्वानन्द जी लगभग डेढ़ वर्ष से हो चुके हैं, यह सब पर प्रगट है। रूहानी जाँनशीन स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज है। उनसे जो कोई सत्संग करेगा अथवा रूहानी उपदेश लेगा उसको दोनों जहान् में बरकत मिलेगी यह हमारी दुआ है आशीर्वाद है। स्वामी योगानन्द जी तथा भक्त अमीरचन्द जी को भी चाहिए कि सब पर ज़ाहिर (प्रगट) कर दें कि रूहानी जाँनशीन स्वामी स्वरूपानन्द जी है। हमारी यह भी आज्ञा है कि स्वामी स्वरूपानन्द जी के दस हजार से भी अधिक उपदेशी होंगे। जो उनसे सत्संग करेगा तथा उपदेश लेगा उसे भी बरकत मिलेगी।

श्री परमहंस दयालजी महाराजजी के शरीर शान्त होने के समय श्री महाराजजी कुलाची, जिला– डेरा इस्माइल खॉ, भक्त भवानी दास तनेजा के निवास स्थान पर विराजमान थे। आप श्री परमहंस दयालजी की आज्ञा अनुसार ही टेरी से बाहर सत्संग प्रचार के लिए गए थे। इसमें भी एक विशेष रहस्य था। ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया महबुबे इलाही ने भी अपने परम शिष्य अमीर खुसरो को अपने शरीर शान्त करने से पहले ही बाहर भेज दिया था, और भी कई महापुरुषों ने ऐसा किया था। एक बार बाबा फ़रीद अपने मुर्शिद हज़रत कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी की सेवा में उपस्थित हुए और उनसे झाँसी जाने की आज्ञा मांगी। हज़रत कुतुब साहिब को बाबा फ़रीद से बहुत प्रेम था। आप आँखों में आँसू भर लाये और बोले– 'ऐ फरीद क्या तुम जा पाओगे?'' बाबा फरीद ने उत्तर दियाः– जैसी आज्ञा होगी उसका मैं पालन करूँगा। हजरत कुतुब साहेब बोले– जाओ, मै क्या करूं, विधाता की यही इच्छा है कि मेरी मृत्यु के समय तुम यहाँ उपस्थित ना रहो। और मैं भी अपने मुर्शिद हजरत ख्वाजा गरीब नवाज के मृत्यु के समय उपस्थित नहीं था।

अन्त में वह अभागा दिन आ पहुँचा। बृहस्पतिवार, 10 जुलाई, सन् 1919 आषाढ़, शुदि् द्वादशी को प्रातः 6 बजे श्री परमहंस दयालजी अपने जीवन लीला समाप्त करके परमधाम को सिधार गये। शास्त्रीय मर्यादानुसार उनको टेरी में भक्त अमीरचन्द जी के मकान में ही समाधि दी गयी। हृदय–विदीर्ण करने वाली यह दुःखद समाचार लेकर जब टेरी के कुछ भक्त श्री महाराजजी के पास कुलाची पहॅुचे और उन्होंने जब यह महाराजजी का यह शोक समाचार सुनाया। तो उनके हृदय पर जो आघात पहुँचा उसको शब्दों में वर्णन करना कठिन है। विरह–वेदना के कारण श्री महाराजजी के नेत्रो से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। मन अति व्याकुल हो गया। कुछ देर पश्चात् बड़ी कठिनाई से अपने को सम्भालते हुए आप टेरी पहुँचे। अपने इष्टदेव भगवान की महासमाधि पर पहुँचकर आपने दण्डवत् प्रणाम किया। श्रीसतगुरुदेव जी के वियोग और दुःख से आप ठण्डी आहें भरने

और नेत्रो से गंगा–यमुना बहाने लगे। फिर कुछ दिल को शांत किया। प्राचीन मर्यादा अनुसार भण्डारे की तैयारी की जाने लगी। श्री महाराजजी ने श्री परमहंस दयालजी के अनन्य सेवको को स्थान–स्थान से बुलवाया। और फिर हजारो रुपये खर्च करके अपने गुरुदेव की पवित्र स्मृति में भण्डारा किया। इसी अवसर पर दीवान भगवानदासजी और दीवान योगराज जी ने उत्तराधिकारी के संबंध में श्री परमहंस दयाल जी का पत्र सर्वसंगत को पढ़कर सुनाया। उसी दिन शुभ मुहूर्त में श्री महाराजजी को पूर्ण रीति से गुरु गद्दी पर बिठाया गया। आपके मस्तक पर आध्यात्मिक उत्तराधिकारी होने के नाते केसर तिलक लगाया गया। इस प्रकार श्री महाराजजी सन् 1919 के जुलाई मास में व्यास पूजा के शुभ दिन आध्यत्मिक जगत के सिंहासन पर विराजमान होकर श्री परमहंस दयाल जी के सपनों को साकार रूप देने लगे।

पृष्ठ– २१ का शेष भाग ......

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।
(गीता–२–५७)

ऐसे पुरुष को जहाँ जो कुछ प्राप्त हो जाता है, उसी से वह संतुष्ट रहता है। साधारणतः कुछ विषयों से हमारा सहज ही राग होता है और उनसे विरुद्ध विषयों के प्रति हमारा सहज ही द्वेष भी हो जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी ने हमें आदर दिया, तो हम प्रसन्न हो जाते हैं, पर अनादर होने पर हमें क्रोध हो आता है। इसका परिणाम होता है कि हमारे भीतर सहजावस्था नहीं हो पाती। यदि हमको किसी विषय से न राग हो न द्वेष तो हमारा मन पूरी तरह शांति की अवस्था में पहुँच सकता है। इसी को गीता में इस तरह रखा गया है–

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति।।
(गीता–२–६४)

अर्थात् जो भी पुरुष विषय से राग–द्वेष नहीं रखता, वह अन्तःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त करता है। हर जीव आनंद खोज रहा है। एक डाकू भी धन लूटकर सुख की ही तलाश कर रहा है। वह उस लूट के माल से मांस–शराब खा–पी कर सुख प्राप्त करना चाह रहा है। कोई आदमी कार पर चढ़कर सुखी होने के प्रयास में लगा है। पर ऐसे लोग सुख की खोज में उसी तरह जीवन भर दौड़ते रहते हैं जैसे हिरण रेगिस्तान में झूठे शांति पानी के पीछे दौडकर प्राण दे देता है। सुख का सही रास्ता तो उपर्युक्त श्लोक में बता दिया गया है। जीवन में अनेक तरह के प्रसंग आते ही रहते हैं, यदि कोई व्यक्ति उनसे राग–द्वेष नहीं रखे, तो उसका मन शान्ति में रहेगा और बिना शान्ति के सुख का अनुभव हो ही नहीं सकता है–

अशांतस्य कुतः सुखम्।

भगवान व्यास महाभारत के अंत में दुःखी मानवता को इस तरह सुख का रास्ता बताते हैंः–

हर्षस्थानसहस्त्राणि त्रयस्थानश तानि च।
दिवसे दिवसे मूढ़माविशन्ति न पण्डितम्।।

"अज्ञानी पुरुष को प्रतिदिन हर्ष के हजारों और भय के सैकड़ों अवसर प्राप्त होते रहते हैं, किंतु विद्वान पुरुष के मन पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वही स्थिर है और बिना इस स्थिरता के सहजावस्था नहीं प्राप्त हो सकती। अतः हम सदा अपने मन को देखते रहें और कभी इसको अवसाद में नहीं जाने दें। यदि हम यह निश्चय बार–बार करें कि हर परिस्थिति में हम प्रसन्न रहेंगे, तो सहजावस्था की ओर बढ़ने में हम कभी न कभी सफल हो जा सकते हैं। होता यह है कि हम क्षण–क्षण हँसते–रोते रहते हैं जिससे मन साम्यावस्था में पहुँच ही नहीं पाता। यहाँ गुरुमंत्र के जाप और सेवा से हमें काफी मदद मिल सकती है। सदा दूसरों की मंगलकामना और सेवा करें, साथ ही गुरुमंत्र के जाप का तार नहीं टूटने दें। सतत अभ्यास से निश्चित वह अवस्था प्राप्त हो सकती है।

"बोलिये श्रीगुरुमहाराज जी की जय!

कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त प्रारब्ध में दखल देना ईश्वरीय कानून की अवज्ञा है। प्रारब्ध एवं प्रकृति से लड़ा नहीं जा सकता। श्रेयस्कर है अपने कर्त्तव्य का पालन करना।–स्वामी परम!

आश्रम समाचार

परमधाम में पूज्य बाबा स्वामी भास्करा नन्दपुरी जी की जयन्ती मनायी गयी।

अनन्तश्री विभूषित भागवत पद सद्गुरुदेव श्री परम गुरुदेव भगवान जी के चरण रज उपासक ब्रह्मलीन पूज्यपाद बाबा भास्करानंदपुरी जी महाराज जी की जयन्ती समारोह दिनांक 31 अगस्त, 2025 (रविवार) को महामंडलेश्वर स्वामी निर्भयानंदपुरी जी (पूज्य माता श्री) की पावन अध्यक्षता में श्री परमपुरी धाम में हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।

दिनांक 30 अगस्त (शनिवार) को प्रातः 9:00 बजे से अखंड नाम संकीर्तन प्रारंभ हुआ। 24 घंटे का अखंड संकीर्तन का गायन भक्तों द्वारा विविध लय धुन पर गाया जा रहा था जो स्वाभाविक भक्तों को आनंद देने वाला था। दिनांक 31 अगस्त दिन रविवार को हवन पूजन के साथ अखंड संकीर्तन समाप्त हुआ।

भक्तों के आने का सिलसिला जारी रहा। शाम तक आश्रम भक्तों से खचाखच भर गया। संध्या 5:00 बजे बैंड बाजे के साथ हाथ में सनातनी ध्वज लिए हुए जयकारा लगाते, नाचते गाते पूज्य बाबा श्री की प्रतिमा को आगे लिए भक्तजन संकीर्तन करते हुए मंदिर की परिक्रमा की। परिक्रमा के बाद सभी भक्तजन गुरु मंदिर में प्रवेश किया, तत्पश्चात् कार्यक्रम प्रारंभ हुआ दिल्ली पंजाब एवं बिहार के लोक गायक भक्तों के द्वारा पूज्य गुरुदेव के चरणों में भजन प्रस्तुत किए गए। संध्या 6:30 बजे से आरती प्रारंभ हुई। सभी भक्तजनों ने श्री गुरुदेव भगवान जी की आरती एवं विनती की तदुपरान्त जन्मोत्सव का कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। दिल्ली से आए भजन गायक जितेंद्र शर्मा, बनारस से आए लोक गायक डॉ श्रवण सिंह, औरंगाबाद से आए रामेश्वर व्यास, महात्मा अखंडानंदपुरी जी, पटना से कुसुम दीदी सासाराम से शांति माता एवं दिल्ली से आई संगत ने पूज्य बाबा श्री के चरणों में भजन प्रस्तुत किया।

रांची से पधारे पूज्यपाद स्वामी पूर्णानंदपुरी जी ने बाबा श्री के चरणों में स्वरचित भजन गाकर सुनाया एवं बाबा श्री के कुछ संस्मरण जो गुरुदेव भगवान जी के प्रति अनन्यता दृढ़ता एवं एकनिष्ठता को प्रदर्शित करती है सुनाए। डॉ नरेंद्र तिवारी (बनारस), डॉ अनिल कुमार राय (हड्डी रोग विशेषज्ञ) बनारस, स्वामी पूर्णानंदपुरीजी (रांची आश्रम), स्वामी चिदानंदपुरीजी (रांची), स्वामी राघवानंदपुरी जी (भरमार),हिमाचल प्रदेश एवं अंत में पूज्यपाद् महामंडलेश्वर स्वामी निर्भयानंदपुरीजी ने बाबाश्री के कर्तृत्व एवं व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए गुरु के प्रति समर्पण त्याग एवं गुरु की प्रसन्नता के लिए किया गया हर कार्य पूजा होती है, ऐसे सुंदर उद्बोधन के साथ पूज्य बाबा के चरणों में प्रणाम निवेदित करते हुए वाणी को विश्राम दी। गुरु का लंगर 8:00 बजे से ही प्रारंभ हो चुका था जिसमें हजारों लोगों ने प्रसाद पाया।

परमधाम दिल्ली में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर श्रीमद्भागवत् कथा का आयोजन।

पूज्यपाद महामण्डलेश्वर स्वामी केशवानन्दपुरी जी महाराज के आशीर्वाद से महामण्डलेश्वर स्वामी श्री निर्भयानन्दपुरीजी (पूज्य माता जी) एवं स्वामी श्री नित्यानन्दपुरी जी के पावन सानिध्य में ''योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण'' के प्राकट्य उत्सव श्री कृष्ण जन्मोत्सव'' के उपलक्ष्य में श्रीमद् भागवत कथा बुधवार 13 अगस्त से 20 अगस्त 2025 तक कथा व्यास श्री देवेन्द्र पाराशरजी के श्रीमुख से श्री परमधाम आश्रम, शास्त्री नगर, नई दिल्ली में सम्पन्न हुआ।

कुकही (जपला) आश्रम में श्रीमद्भागवत् तत्व कथा का आयोजन।

कुकही आश्रम (जपला) में श्री स्वामी राघवानन्दपुरी जी का 70वाँ जन्म दिवस समारोह 03 सितम्बर,2025 को मनाया गया। इस अवसर पर 28 अगस्त, 2025 से 03 सितम्बर तक भरमार आश्रम, हिमाचल प्रदेश से पधारे श्री स्वामी राघवानन्दपुरी जी के मुखारविन्द से श्रीमद् भागवत तत्व कथा का संगीतमय वाचन किया गया। दिनांक 28 अगस्त को प्रातः 09 बजे से कलश–यात्रा प्रारम्भ हुआ तदुपरान्त दोपहर 02 बजे से 05 बजे तक श्रीमद् भगवत कथा का संगीतमय वाचन प्रतिदिन दिनांक 03 सितम्बर तक किया गया। तत्पश्चात् भजन–आरती–प्रवचन आदि के कार्यक्रम के उपरान्त गुरु के लंगर का आयोजन किया गया।

पंचकूला में रक्तदान शिविर का आयोजन

श्री परमहंस दयाल सत्संग सभा की ओर से श्री अद्वैत मत के प्रर्वतक आध्यात्मिक सम्राट रुहानियत के शहंशाह श्रीस्वामी अद्वैतानन्दजी महाराज ''परमहंस दयाल'' व परम श्रद्धेय श्री स्वामी गुरुशरणानन्दजी महाराज के पावन निर्वाण दिवस के उपलक्ष में रक्तदान शिविर का आयोजन 14 सितंबर 2025 को हैपी फैमिली अस्पताल मन्सा देवी कॉम्प्लेक्स, सैक्टर 5, पंचकूला में लगाया गया। सभा के संयोजक कैलाश सरदाना, प्रधान सुभाष चंद्र बत्रा, महासचिव बृजेश वर्मा, कैशियर गुरु प्रसाद धीमान व हैपी फैमिली अस्पताल के डा. पिंकेश वर्मा जी ने बताया कि कैंप का आयोजन सभा ने भारत विकास परिषद विवेकानंद ब्रांच मनी माजरा के सहयोग से किया गया। कार्यक्रम के दौरान सुबह 9 बजे से दोपहर 2 बजे तक 55 लोगो ने ब्लड डोनेट किया। उन्होंने बताया कि सभी डोनर्स को दूध, फ्रूट, सैंडविच व पकोड़े, वितरित किए गए और बाद में ब्लड डोनर, सरकारी अस्पताल पंचकूला के डाक्टर व स्टाफ टीम को गिफ्ट देकर सम्मानित किया गया।

✦

पूज्यपाद संत स्वामी प्रेमानन्दपुरी जी का जन्म दिन गोपाल एंक्लेव, बटाला में मनाया गया।

बटाला (पंजाब) में गोपाल एंक्लेव में संत प्रेमानन्दजी का जन्म दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर दूर–दूर से उनके अनुआई उन्हें बधाई देने के लिए आए हुए थे। सबने मिलकर नंगली सरकार के भजन गाये और उनकी लीला और महिमा का गुणगान किया। तत्पश्चात् लंगर और भंडारा आयोजित किया गया। संत सतप्रेमानन्दजी ने सबको आशीर्वाद दिया तथा नंगली सरकार के दिए हुए उपदेशों के अनुरूप जीवन का पालन करने और बताए हुए मार्ग पर चलने के लिए कहा। साथ ही इस अवसर पर पधारे संगत के सभी भक्तों को धन्यवाद ज्ञापित किया गया।

✦

जन्माष्टमी के अवसर पर तरबगंज,गोण्डा में खुला परम ज्ञान वैदिक गुरुकुल विद्यापीठम्

श्री कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर तरबगंज विकासखण्ड के ग्राम पंचायत सिगहा चन्दा स्थित अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम, गोण्डा (उत्तर प्रदेश) में परम ज्ञान वैदिक गुरुकुल विद्यापीठ स्कूल का उद्घाटन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री स्वामी भुवानन्दपुरी जी महाराज ने की। मुख्य अतिथि के रूप में ब्लॉक प्रमुख श्री मनोज पाण्डेय तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में पूर्व जिला पंचायत सदस्य श्री जितेन्द्र कुमार पाण्डेय उपस्थित रहे।

✦

पटना संगत का मासिक सत्संग कार्यक्रम

पटना संगत का मासिक सत्संग कार्यक्रम 07. 09.2025 रविवार को पटना के बंगाली टोला (मीठापुर) अवस्थित दुर्गा प्रसाद सिंहजी (दारोगाजी) के आवास पर अवध कुमार चौधरीजी की अध्यक्षता में तथा गुरु दरबार के महात्मा श्री स्वामी अखंडानंदपुरी जी महाराज के पावन सानिध्य में बड़े ही धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

सर्वप्रथम राजदेव भाई ने''राम नाम के हीरे मोती संत बिखेरे गली–गली,'' निर्मला बहन ने ''बाबा फुलवड़िया गम गम गमके चमेलिया ये वनमाली मनवा'' भोजपुरी भजन गाया। विजय भाई ढोलक के ताल से कार्यक्रम में चार चांद लगा दिये। अवध कुमार चौधरीजी ने ''होई सद्गतिया होई सद्गतिया होई सद्गतिया,'' संगीता बहन ने ''जग असार है सार रसना हरी हरी बोल'' एवं अन्य भक्तों ने भजन गाकर भक्तों को भाव विभोर कर दिया। परम ज्ञान प्रकाश पत्रिका के कार्यकारी संपादक जगदीश भाई ने गुरु भाई–बहनों को अगस्त सितंबर 2025 का संयुक्तांक पत्रिका सौंपकर नये ग्राहक बनने–बनाने के लिए आग्रह किया। महात्मा श्री स्वामी अखंडानंदपुरी जी महाराज ने प्रवचन के माध्यम से भक्तों को बताया कि काम करते हुए, स्नान करते हुए, घर गृहस्थी संभालते हुए हर समय गुरु महाराजजी का नाम लेते रहिए आपका बेड़ा पार हो जाएगा। इस तरह उन्होंने भक्ति का सुगम रास्ता बताया। अंत में आरती के बाद सभी गुरु भाई–बहन प्रेमीजन एक साथ पंगत में बैठकर श्रीगुरु महाराजजी के लंगर का महाप्रसाद ग्रहण किया।

✦

–ः विनम्र निवेदनः–

सभी लेखको कवियों, साहित्यकारों, पूज्य महात्मागणों एवं पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे अपनी रचना/अपने विचार–उद्गार शुद्ध–शुद्ध रूप में टंकित 'परमज्ञान प्रकाश' के वाट्सअप पर मो0 नं0 7372000512 पर भेजने की कृपा करें। – सम्पादक!

माह अक्टूबर, २०२५ का राशिफल

प्रस्तुति— डॉ०नरेन्द्र तिवारी ज्योतिर्विद

पूर्व प्रधानाचार्य	—: सम्पर्क सूत्र :—	आवास
श्री हनुमंत संस्कृत उ०म० विद्यालय, चौकाघाट, वाराणसी ।	मो० नं० 9839143791 9044143791	नई बस्ती, मड़ौली, पो० भुल्लनपुर, (डी० एल० डब्लु०), वाराणसी।

मेष राशि— नई योजना की शुरुआत कर सकते हैं। कुछ समस्याओं का समाधान होगा तथा न्यायालय के कार्यों में लाभ होगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। नॉकरी से लाभ मिलेगा।

वृषभ राशि— स्वास्थ्य में उतार—चढ़ाव होगा। रोजी—रोजगार के लिए प्रयत्नशील रहें। रोग भय, जल भय, कार्यो में व्यतिक्रम का होना, एवं पारिवारिक जिम्मेदारियाँ बढ़ेगी।

मिथुन राशि— नॉकरी—व्यापार में लाभ, अपने लोगों से सहायता मिलेगी तथा कहीं विरोध भी होगा। आय की अपेक्षा खर्च अधिक होगा। परिवार में असंतोष बना रह सकता है।

कर्क राशि— धौर्य सहानुभूति से बिगड़े काम बनेंगे। रुके कार्य एवं धन प्राप्ति से मन प्रसन्न रहेगा। खान—पान रहन—सहन का ध्यान रखें। गृह कलह मन अशान्त रहेगा।

सिंह राशि— नवागन्तुओं का आना—जाना बना रहेगा। व्यय बढ़ेगा, मन चिन्ताग्रस्त होगा। कथा, गुरु पूजा से बहुत राहत मिलेगी तथा विचारित कार्य पूर्ण होंगे।

कन्या राशि— नॉकरी—व्यापारादि में परिवर्तन का अवसर मिलेगा। बड़े लोगों का सहयोग मिलेगा। अचानक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती है। स्वास्थ्य उत्तम, परिवार में तनाव होगा।

तुला राशि— शत्रु पराजित होंगे, सैम्यता का वातावरण बनेगा। मन में उत्साह उत्पन्न होगा। बड़ों की संगति—सहयोग से लाभ मिलेगा। समाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी।

वृश्चिक राशि— वौधिक उल्झनों का समाधान होगा। अप्रत्यासित लाभ होगा। विवादों से छुटकारा मिलेगा। कठिन परिश्रम से लाभकारी योजनाओं से लाभ मिलेगा।

धनु राशि— स्त्री—सन्तान सुख की प्राप्ति से मन प्रसन्न रहेगा। धीरे—धीरे बिगड़े कार्य बनेगे। रचनात्मक कार्य करने का अवसर मिलेगा। विचारित कार्य पूर्ण होंगे।

मकर राशि— आर्थिक, मानसिंक, पारिवारिक राजनैतिक सफलता प्राप्त होगी। शैक्षिक कार्यों में व्यावधान आयेगा। नए लोगों की संगती सुखदायक होगी। स्त्री—सन्तान सुख।

कुम्भ राशि— पारिवारिक उल्झनों से मन अशान्त रहेगा। स्वास्थ्य सुख सामान्य रहेगा। अचानक शुभ सूचना से मन प्रसन्न होगा। देश—विदेश यात्राओं का अवसर मिलेगा।

मीन राशि— रुके कार्य पूर्ण होंगे। कठोरता का त्याग कर व्यवहारिकता से सभी कार्य पूर्ण होंगे। भवन—भूमि में वृद्धि होगी। नेत्र विकार, उदर विकार से कष्ट होगा।

*

—: अक्टूबर, २०२५ का मुख्य पर्व :—

०२.१० (गुरुवार)—विजयादशमी, नीलकंठ दर्शन, जगतवंद्य पूज्यपाद श्री नंगली निवासी भगवान का गुरुगद्दी दिवस। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी एवं लाल बहादुर शास्त्री की जयन्ती।

०३.१० (शुक्रवार)—पापांकुशा एकादशी एवं भरत मिलाप।

४०.१० (शनिवार)—प्रदोश व्रतम्।

७०.१० (मंगलवार)—पूर्णिमा कार्तिक स्नानारम्भ। महर्षि बाल्मिकी जयन्ती।

१०.१० (शुक्रवार)—करवा चौथ, गणेश चतुर्थी।

१७.१० (शुक्रवार)—रम्भा एकादशी।

१८.१० (शनिवार)—शनि प्रदोष, धनतेरस, धनवन्तरी जयन्ती।

१६.१० (रविवार)—श्री हनुमज्जयन्ती, नरक चतुर्दशी।

२०.१० (सोमवार)—दीपावली।

२२.१० (बुधवार)—गोवर्धन पूजा, अन्नकूट(काशीतो अन्द्य)।

२३.१० (गुरुवार)—भ्रातृ द्वितीया, काश्या गोवर्धन पूजा, चित्रगुप्त पूजा।

२५.१० (शनिवार)—सूर्य षष्ठी व्रतारम्भ।

२७.१० (सोमवार)—सूर्य षष्ठी व्रतम् (छठ)।

२६.१० (बुधवार)—गोपाष्टमी (गौ पूजनम्)।

३०.१० (गुरुवार)—अक्षय नवमी व्रतम्।

*

परमार्थ के पैसे को मनमाने ढंग से खर्च करने पर नुकसान ही होता है। दान का पैसा व्यावहारिक कार्यों के लिए जहर है। —स्वामी परम।

माह नवम्बर, २०२५ का राशिफल

प्रस्तुति– डॉ०नरेन्द्र तिवारी ज्योतिर्विद

पूर्व प्रधानाचार्य	–: सम्पर्क सूत्र :–	आवास
श्री हनुमंत संस्कृत उ०म० विद्यालय, चौकाघाट, वाराणसी ।	मो० नं० 9839143791 9044143791	नई बस्ती, मड़ौली, पो० भुल्लनपुर, (डी० एल० डब्लु०), वाराणसी।

मेष राशि– अप्रत्यासित लाभ का अवसर मिलेगा, मित्र बान्धवों के सहयोग से कार्य बनेंगे। बड़ो के अशीर्वाद से मान–सम्मान, प्रतिष्ठा बढ़ेगी। न्यायालय में सफलता।

वृषभ राशि– वाणी की चतुरता से बिगड़े काम बनेगे। अचानक विचारित कार्यों में सफलता मिलेगी। योजनाओं में सफलता मिलेगी। मित्र–बान्धवों में हर्षोल्लास होगा।

मिथुन राशि– मन प्रसन्न रहेगा, घर परिवार में मांगलिक कार्य करने की रूप–रेखा बनेगी। दयालुता एवं विनम्रता के फलस्वरूप ठगे जाने का अवसर प्राप्त होगा।

कर्क राशि– स्वास्थ्य अच्छा होगा, चल अचल सम्पत्ति वृद्धि का अवसर मिलेगा। रोजी रोजगार में लाभ होगा। अपने लोगों से मान–सम्मान प्राप्त होगा।

सिंह राशि– स्त्री सन्तान सुख की प्राप्ति से मन प्रसन्न रहेगा। नौकरी व्यापारादि में बड़ों के सहयोग से लाभ मिलेगा। नए लोगों से सम्बन्ध अच्छे होंगे। राजनैतिक सफलता।

कन्या राशि– आर्थिक, मानसिक, पारिवारिक उलझनों से मन अशान्त होगा, अनायास वाद–विवाद की स्थिति आएगी। क्रोध पर नियंत्रण रखना लाभप्रद रहेगा।

तुला राशि– नॉकरी व्यापारादि के कार्यों में उल्झनों का दौर बढ़ेगा। कार्याधिक्य से मन अशान्त होगा। शिक्षा के क्षेत्र में कठिन परिश्रम से सफलता प्राप्त होगी।

वृश्चिक राशि– रोजी रोजगार में बदलाव निराशा कारक होगा। अपने बिगड़े कार्यों में सफलता प्राप्त करने के लिए बड़े लोगों से समझौता करना व बातों को मानना पड़ेगा।

धनु राशि– नॉकरी व्यापारादि एवं विचारित कार्यों में अचानक लाभ का अवसर मिलेगा। दाम्पत्य जीवन तनावपूर्ण होगा। शिक्षा के अवसर मिलेंगे तथा उससे लाभ होगा।

मकर राशि– हर क्षेत्र में संभलकर चलना श्रेयष्कर होगा। स्वास्थ्य सुख में उतार–चढ़ाव आएगा। बने बनाये कार्यों में अनायास उलझने आएगी। भविष्य की चिन्ता होगी।

कुम्भ राशि– अपने समस्त विचारित कार्यों में आत्म बल एवं विश्वास के साथ सफलता प्राप्त करेंगे। आर्थिक सफलता के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ेगा।

मीन राशि– देश–विदेश यात्राओं का अवसर मिलेगा। घर परिवार में विवाह आदि मांगलिक कार्य होंगे। दुविधाएँ एवं व्यावधान समाप्त होंगे तथा विचारित कार्य पूर्ण होंगे। ❋

–: नवम्बर, २०२५ का मुख्य पर्व :–

०१.११ **(शनिवार)**– प्रवोधनी एकादशी व्रतम्।
०२.११ **(रविवार)**– तुलसी विवाह।
०३.११ **(सोमवार)**– प्रदोष व्रतम्।
०४.११ **(मंगलवार)**– वैकुण्ठ चतुर्दशी, काशी विश्वनाथ प्रतिष्ठा दिनम्।
०५.११ **(बुधवार)**– देव दीपावली, कार्तिक दर्शन, श्री गुरु नानक जयन्ती।
०८.११ **(शनिवार)**– संकष्ठी श्री गणेश चतुर्थी।
१२.११ **(बुधवार)**– भैरवाष्टमी।
१४.११ **(शुक्रवार)**– श्रीत्रिदण्डी स्वामी पुण्यतिथि।
१५.११ **(बुधवार)**– उत्पन्ना एकादशी।
१७.११ **(सोमवार)**– प्रदोष व्रतम्।
१८.११ **(मंगलवार)**– मास शिवरात्रि व्रतम्।
२४.११ **(सोमवार)**– वैनायकी श्री गणेश चतुर्थी।
२५.११ **(मंगलवार)**– श्री राम विवाहोत्सव।
२६.११ **(बुधवार)**– श्री बलदेव जयन्ती।
२८.११ **(शुक्रवार)**–परमपुरी आश्रम स्थापना दिवस।

❋

—: विवेक वाटिका :—

एक गाँव में दो भाई रहते थे। दोनों में बहुत प्रेम था। कुछ दिनों के बाद वे आपस में बंट गये, बंटते ही दोनों के प्रेम में दरार पड़ गये। एक दूसरे की बढ़ती को देखना नहीं चाहते थे। सच तो यह था कि उन्हें अपने दुःख का जितना कष्ट नहीं होता था उससे अधिक अपने भाई के बढ़ती को देख कर होता था। सदा एक दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयत्न में लगे रहते थे। धीरे–धीरे आपस में मार–पीट, कोर्ट–कचहरी का भी दौर शुरू हो गया। दोनों की नींद हराम होने लगी। चिन्ता की आग से जीते जी ही जलने लगे। घर में सब सुख–सुविधा रहते हुए भी दुःखी दिखाई देने लगे। संयोग से एक दिन उनके गाँव के ही पंडित जी आ धमके। दोनों भाई भी वहीं इकट्ठे मिल गये। पंडित जी ने कहा–अरे भाई; तुम दोनों आपस में बड़े प्रेम से रहते थे, अब क्या हो गया कि तुम आपस में नित्य लड़ाई झगड़ा करते हो ? दोनों ने अपनी–अपनी बातें पण्डित जी के समक्ष रख दी। पण्डित जी ने कहा– इसमें क्या है, इतनी सी बात के लिए तुम सब आपस के प्रेम को समाप्त कर स्वर्ग जैसे घर को नरक बना दिया है। मेरी बात मानो तुम्हारा कल्याण हो जायेगा। पंच परमेश्वर होते हैं। परमेश्वर की बात मान लेने से कल्याण ही कल्याण होता है। अतः तुम अपनी ओर से दो पंच का नाम प्रस्तावित करो और दो का नाम तुम्हारे भैया प्रस्तावित कर दें। पाँचवें में मैं रहकर तुम सभी का निपटारा कर दूंगा।

दोनों भाइयों ने आपस में कानाफूसी की। जब संयोग बनने का होता है तो ऐसे ही बन जाता है। दोनों भाइयों ने आपस में विचार किया– यह पण्डित सदा हम दोनों को लड़ा कर अपना वर्चस्व कायम करने को चेष्टा करता आया है। सच है इसकी ही मंत्रणा है जो हम आज दो पाट में बंट गये है। एक दूसरे के जान के लाले पड़े है। फिर भला वह हम सबका पंचायत द्वारा कहाँ तक हित साधन कर सकेगा? दोनों की सुबुद्धि जगी और एक साथ दोनों ने कहा– पंडित जी! कान खोलकर सुन लें, हुप दो–दो पंच तो मान लेंगे परन्तु आपको पंच नहीं मानेंगे। पंडित जी ने कहा– अरे तुम्हारे मानने न मानने से क्या होता है? अरे में तो तुम्हारे दादा, बाप के समय से पंच माना जाता आया हूँ, और आज भी माना जाता हूँ। तुप पंच मानो या न मानो मैं तो एक पंच रहूँगा ही। तुम्हारे मानने न मानने से क्या होता है? दोनों के कान खड़े हो गये। दोनों भाई समझ गये हम दूसरों को पंच क्यों मानें, हम आपस में ही बैठ कर अपनी समस्या का समाधान क्यों न कर लें। अरे, कुछ कमाकर ज्यादा किसी को हो जायेगा तो घर में ही तो होगा। बाहर कोर्ट कचहरी या पंचायत के खर्च में व्यर्थ बर्बाद तो नहीं होगा। वे दानों आपस में गले से गले मिले पुनः पहले जैसा भाव हो गया। घर में सुख शांति का सागर उमड़ने लगा ।❀

पूज्यपाद श्री भास्करानन्दपुरी जी महाराज का पावन जयंती समारोह के अवसर पर दिनांक-31.08.2025 को श्री परमपुरीधाम रायपुरचौर, सासाराम (रोहतास), बिहार में आयोजित कार्यक्रम की एक झलक ।

श्री परमधाम आश्रम, शास्त्रीनगर, नई दिल्ली में श्री कृष्ण जन्मोतस्व के उपलक्ष्य में श्री मद् भागवत कथा (दिनांक-13 -20 अगस्त 2025) के आयोजन की एक झलक ।

R.N.I.'s Regd. No. 22165/71 Postal Regd.No. SSR/G-1/23-25

LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT No. 01/LWP/SSR/96

परम ज्ञान प्रकाश आध्यात्मिक मासिक अक्टूबर- 2025

✓ बिहार सरकार द्वारा पुस्तकालय एवं शिक्षण-संस्थाओं के लिये स्वीकृत

✓ गृह विशेष, बिहार सरकार की सूची में दर्ज, ज्ञापन- संख्या : 5449/C

पावन समाधि स्थल पूज्यपाद बाबा श्री स्वामी भास्करानंदपुरीजी महाराज

दिनांक 28 अगस्त से 3 सितंबर तक संगीतमय श्रीमद्भागवत कथा का वाचन पूज्य स्वामी राघवानंदपुरी जी के मुखारविंद से कुकुही (जपला) आश्रम में संपन्न हुआ।

सेवा में,

ग्राहक सं.______________________

श्रीयुत/श्रीमती______________________

____

सदस्यता-शुल्क सूची

एक प्रति रू॰ 25.00 एक वर्ष का रू॰ 251.00 त्रैवार्षिक रू॰ 751.00 पंचवार्षिक रू॰ 1251.00

दसवार्षिक रू॰ 2551.00आजीवन- रू॰ 5001.00 संरक्षक- रू॰ 7551.00 विशेष संरक्षक- रू॰ 11111.00

पत्रिका के नये ग्राहक बने/ बनावें एवं पत्रिका का बकाया शुल्क खाता सं0 3006000100003076

IFSC Code: PUNB0300600 खाता का नाम- 'परम ज्ञान प्रकाश', पंजाब नेशनल बैंक शाखा- रायपुरचौर में जमा करे।

सम्पादक- डा0 नरेन्द्र तिवारी 'ज्योतिर्विद' -सह सम्पादक- स्वामी प्रज्ञानन्दपुरीजी

कार्यकारी सम्पादक - श्री जगदीश प्रसाद सिन्हा 'दयानिधि'

E-mail ID: jagdish.pds5@gmail.com Mob:9334319012

प्रकाशक-परम ज्ञान परिषद्-श्री अद्वैत स्वरूप संन्यास आश्रम परमपुरी

ग्राम + पोस्ट - रायपुरचौर, जिला-रोहतास - 821113 (बिहार)

मुद्रकः शार्प कम्प्यूटर्स, पटना मोः 9334205352, 9279180358